चारों धाम की यात्रा

पं० ठाकुर दत्त शर्मा

* श्रीहरिः *

चारोंधामकी यात्रा

लेखक—
ठाकुरदत्त शर्मा दाधीच

मिलनेका पता—
दधीचि एण्ड कम्पनी
नं० ४ बेहरापट्टी,
कलकत्ता।

प्रथमवार ५०००] १९८२ चैत्र [मूल्य ॥)

प्रकाशक—
ठाकुरदत्त शर्मा दाधीच
दधीचि एण्ड कम्पनी
नं० ४ बेहरापट्टी,
कलकत्ता ।

मुद्रक—
किशोरीलाल केडिया
"वणिक् प्रेस"
१, सरकार लेन
कलकत्ता

निवेदन

जगदाधार श्री परमात्माकी अन्तः प्रेरणासे पहली बार मेरी यात्रा सम्वत् १९६४ में, मेरी धर्ममाता, रायबहादुर सेठ भगवानदासजी बागलाकी धर्मपत्नीके साथ हुई थी। तत्पश्चात् पुनः दो बार यात्राका सौभाग्य प्राप्त होनेसे पूर्वापरका अनुभव मिलाकर यह पुस्तक लिखी गयी है। उसी समय पवित्र तीर्थयात्रापर एक पुस्तक लिखनेकी लालसा बीजरूपसे मेरे हृदयकी भूमिमें सुरक्षित हो गई थी। किन्तु अनुकूल समयके अभावसे अंकुरित होकर पुष्प-पल्लवोंसे हरीभरी होनेका अवसर आजतक उसे नहीं मिला था। इतने दिनों बाद मेरी वह चिरकालीन आभ्यन्तरिक अभिलाषा इस छोटी-सी पुस्तिकाके रूपमें सहृदय-पाठकोंकी सेवाके लिये उपस्थित हुई, मैं इसके लिये सफलताके आधार, परमपिता परमेश्वरका कृतज्ञ हूं। यद्यपि इस पुस्तिकामें, यात्रियोंके सुभीतेके लिये तीन धामोंकी यात्राका संक्षिप्त और सरल भाषामें आवश्यक कुल वर्णन आ गया है। केवल बदरीनाथकी यात्रापर एक दूसरी स्वतन्त्र पुस्तकका विचार रहनेके कारण, उसकी वर्णना एक तरहसे पूरी, किन्तु बहुत ही संक्षिप्त की गई है। यदि मेरे परिश्रमसे पाठकोंको कुछ भी आनन्द मिला और उन्हें तीर्थयात्रामें इससे परिचयदर्पणके तौरपर कुछ भी सुभीता हुआ तो मैं अपने परिश्रम और व्ययको सार्थक और अपने जीवनको धन्य समझूंगा। इति शुभम्।

विनीत—

ग्रन्थकार

विषय-सूची

श्रीहरिः

चारों धामकी यात्रा

मुरली-मनोहर पीतपट-धर सच्चिदानन्द श्रीकृष्णचन्द्रकी जिसपर कृपा हो उसके भाग्यका फिर कहना ही क्या? जीते ही उसे स्वर्गसुखसे बढ़कर आनन्द है—वह परम-पदका सर्वोत्तम अधिकारी है—उसके पिता और माता भी उस भगवद्भक्तकी भक्ति-भावनाके बलसे अनन्तकालतकके लिये श्रीवैकुण्ठ-लोकसे भी उच्चपद मोक्षधामवासी हो जाते हैं। इतना ही नहीं, शास्त्रोंमें परमाराध्य महापुरुषोंने कहा है कि उस यशस्वी सन्तानकी सात पुश्ततक दोनों कुल इस भीम भवार्णवसे पार हो जाते हैं। फिर वह जीवन्मुक्तकी तरह इस संसारमें तीर्थसे भी बढ़कर हो जाता है। उसकी महान आत्माके संपर्कसे अत्यन्त नीच कर्म करनेवाले इतरजनोंकी बुद्धि भी विमल हो जाती है और उन्हें भी भगवत्-रसास्वादनका अपार आनन्द मिल जाता है। जिनकी बुद्धिमें निर्मल विवेककी अचल सत्ता है, जिन्हें भगवद्-भक्ति और ईश्वरा-राधन ही इस नश्वर नर-जीवनके लिये अमर आदर्श मालूम हो गया है, जो उस परब्रह्म आनन्दकन्द भगवान श्रीकृष्णचन्द्रको सदा ही मन, वचन और कर्मोंसे अपने जीवनकी परमप्रिय प्राणोंसे

प्यारी सम्पत्ति समझते हैं, चारों धामोंकी, पुण्य-भरी, शान्ति-सुखदा यात्रा करनेकी इच्छा, उन्हींके पवित्र हृदयस्थलको आलोक-पुलकित करके उनमें उत्साहकी शीतल-मन्द समीर संचारित करती है उनका मुखावलोकन कर उनका देश पवित्र होता है, गांव और घर तो धन्य ही हो जाता है। तीर्थसे लौटे हुए अपनेसे उम्रके छोटे पड़ोसीके चरणोंका स्पर्श करना आज भी हमारे देशमें प्रचलित रहकर तीर्थ-दर्शनके अकथनीय माहात्म्यकी साखी दे रहा है। अस्तु।

जब कभी परमात्माकी प्रेरणा तीर्थ-दर्शनके लिये हृदयमें हो जाय; शारीरिक, मानसिक और आर्थिक सुयोग संगठित रूपसे सामने आ जायं; मन प्रफुल्ल और इस जीवनानन्ददायी दर्शनके लिये मचल-मचलकर उधर होको मोड़ता रहे, उस समय ऐसे स्वर्ण-सुयोगको हाथसे किसी हालतमें न जाने देना चाहिये। उस समय भगवच्चरणारविन्दानुरागी परमभाग्यशाली उस तीर्थ-दर्शनाभिलाषीको अपने मनकी साध अवश्य ही पूरी कर डालना चाहिये। तीर्थ-यात्राका सबसे प्रशस्त और सुहावना समय वर्षा कालका अन्तिम समय भाद्रपदका कृष्णपक्ष ही है। इस समय प्राकृतिक दृश्य बड़े ही मनोहर रूपसे, यात्रियोंका स्वागत करनेके लिये सोत्साह हरीभरी दृष्टिसे ताकते रहते हैं। वर्षा-विहारके अनन्तर आकाश भी निर्मल हो जाता है। सारांश यह कि इस समयकी जलवायु, प्रथम तीनोंधामोंकी यात्रामें यात्रियोंके लिये समयानुकूल और सुखप्रद होती है। तीनोंधामकी यात्राके लिये

दूसरे मार्गोंसे आरामप्रद कलकत्तासे होनेवाली यात्रा है। बाहरके लोगोंके लिये, वे चाहे बंगाल-विहार और संयुक्तप्रान्तके जिस स्थानमें रहते हों, कलकत्ता आकर फिर पुरीकी यात्रा करना अच्छा है। शुभ मुहूर्तमें प्रस्थान करनेसे पहले यात्रियोंको निर्विघ्नताके लिये नान्दीमुखश्राद्ध घरपर कर डालना चाहिये। फिर कलकत्तामें श्रीकालीजी आदि प्रमुख देवताओंके दर्शन-पूजनकर रात्रिमें ८ बजे हवड़ेसे पुरी जानेवाली स्पेशल गाड़ीपर सवार होकर यात्रियोंको अपनी परम पवित्र तीर्थयात्राका श्रीगणेश करना चाहिये। गाड़ी हवड़ेसे छूटकर एकबार ही खड़गपुर ठहरती है। फिर चलती हुई प्रातःकालको भुवनेश्वर स्टेशनपर पहुंच जाती है।

भुवनेश्वर-यात्रा

भुवनेश्वरके यात्री यहीं उतरते हैं। श्रीजगन्नाथजीके दर्शक-यात्री भी पहलेसे विचार दृढ़ करके, यहां उतरकर, श्रीभुवनेश्वर प्रभुके दर्शन-वन्दनके पश्चात् श्रीजगन्नाथजीकी यात्रा करें तो अच्छा हो। सीधे श्रीजगन्नाथ-धाम जाकर वहांसे लौटते हुए कुछ असुविधा होती है।

यहां स्टेशनपर बैलगाड़ियां मिलती हैं। इनके बैल बहुत कमज़ोर होते हैं। एक गाड़ीमें चारसे अधिक आदमियोंके लिये

जगह नहीं है। गाड़ीवान पैदल ही बैलोंको हांकता है। ये बैल बिना नाथके ही जोते जाते हैं। चलते भी हैं बहुत धीरे धीरे। यहांके भूदेव स्टेशनसे प्रस्थान करनेपर रास्तेमें ही यात्रियोंको मिलते हैं। यहांसे भुवनेश्वर पांच मील पड़ता है। पर ये लोग यात्रियोंसे निमंत्रण पानेके लिये यहीं उन्हें मिल जाते हैं। रास्तेमें एक बड़ा ही मनोहर आकर्षक दृश्योंसे भरा हुआ एक वन (आरण्य) मिलता है जिसे देखकर आत्माको अत्यन्त शान्ति मिलती है। इस वन-मार्गमें देवताओंके कितने ही मन्दिर मिलते हैं। धर्मनिष्ठ यात्री गाड़ीसे ही हाथ जोड़-जोड़कर इन मन्दिरोंके अधिष्ठित देवताओंको प्रणाम करते जाते हैं। अगर वे हर जगह उतरकर हर एक मन्दिरके देवताकी पूजावन्दना करके भुवनेश्वर जानेका विचार करें तो इस तरह उन्हें बड़ी देर लग जाय, और प्रचण्ड धूपसे उन्हें कष्ट भी बहुत हो।

भुवनेश्वर पहुंचनेपर वहां एक और बड़ा भारी तीर्थस्थान मिलता है। इसे "विन्दु सरोवर" कहते हैं। यह, अगाध जलसे पूर्ण है। इसका विस्तार भी सैकड़ों बीघोंको घेरकर है। निर्मल स्वच्छ जल, तिसपर तरंगोंकी तरल हिलोरें, देखते ही बनता है, आंखें थक जाती हैं, मन मन्त्रमुग्ध हो जाता है। ऋषियोंने सब तीर्थोंके जल-विन्दुओंसे इस सरोवरकी पवित्रता बढ़ाई थी। लेकिन बड़े खेदकी बात है कि हमलोग जब गये, तब देखा कि एक मछुआ उसी सरोवरमें मछली मार रहा है। हममेंसे एकने पंडाजीसे कहा, "महाराज! तीर्थस्थानमें तो यह बहुत बड़ा पाप हो

रहा है, इसका कोई प्रतिकार आपलोग क्यों नहीं करते कि मछलियोंका मारा जाना यहां बन्द कर दिया जाय।" पंडाजी गवर्मेंट-पर आक्षेप करने लगे। कहा कि "यजमान, अब हमारा कुछ बस नहीं है।" हममेंसे एकने कहा, "पंडाजी महाराज! आप गवर्मेन्ट-को दोष न दें। यह तो हमारे धार्मिक अधिकारोंमें दखल ही नहीं देती। यह काम मछलियोंके बचानेका यहांके धर्मात्मा यात्री सनातनधर्मी भाइयोंका ही होना चाहिये कि वे इस महा अनर्थकी ओर ध्यान दें और निरपराध जीवोंकी हत्यारोंके हाथोंसे रक्षा करें। यदि यहांके तीर्थयात्री इस घोर अन्यायके लिये एक स्वरसे इसका विरोध करें तो अवश्य ही इसका सुधार हो जाय। बाहर-के धर्म-ध्वजा-धारियोंको भी इस घृणित कार्यके विरोधमें ऊंची आवाज उठानी चाहिये ताकि इस तीर्थस्थानकी पवित्रता और दयाभावकी रक्षा हो।

हर्षकी बात है कि एक स्वनामधन्य मारवाड़ी-सज्जन हरगोविंद राय मथुरादास डालमियां भिवानीनिवासीकी बनाई एक सुन्दर,सुखप्रद धर्मशाला इस सरोवरके तटपर विराजमान है। इसकी ऊपरवाली मंजिलमें यात्रियोंको ठहरनेसे काफी आराम मिलता है। यहां उतरकर यात्री सबसे पहले सरोवरमें स्नान-तर्पण और अपने पितृदेवोंको पिण्डदान करते हैं। तत्पश्चात् फल-फूल,-मेवा-मिष्टान्नसे सुसज्जित पूजनका कुल सामान लेकर भगवान श्रीभुवनेश्वरजीकी पूजार्चा करते हैं। इस सरोवरसे थोड़ी ही दूरपर एक मन्दिर बना हुआ है जिसके द्वारपर व्याघ्रोंके

विचित्र आकारकी दो मूर्तियां बनी हुई हैं। इसे सिंहपोल कहते हैं। द्वारके भीतर जाते ही मन्दिरका उच्च शिखर-देश दिखाई देने लगता है। अत्यन्त प्राचीन कालका बना हुआ होनेपर भी मन्दिर-में कहीं भी भग्नांश नजर नहीं आता कि कोई कह सके, अमुक स्थानपर इसकी मरम्मत हुई है। मन्दिर सर्वाङ्गसुन्दर और बहुत सुडौल बना हुआ चित्ताकर्षक प्रतीत होता है। भारतकी प्राचीन मन्दिरनिर्माण-कलाकी यह एक जीती-जागती विभूति है। इसके चारों ओर छोटे-बड़े और भी कई मन्दिर हैं जिनसे इस मन्दिरकी शोभा कई गुनी बढ़ जाती है। मन्दिरके भीतर ठीक बीचों-बीच भगवान भुवनेश्वरजी विराजमान हैं। यह स्थान गोलाकार जलसे भरा हुआ ११ हाथके फेरेमें है। भगवान भुवनेश्वर न तो शिवलिंगके रूपमें हैं, न उनके स्वरूपकी ही कोई मूर्ति है। तीनों देव, अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश प्रतीत होते हैं। भगवान भुजंग-भूषण महेश्वर महादेवकी आरतीके समय भक्तगण मधुर उच्चस्वरसे स्तुतियोंका पाठ किया करते हैं। यात्रियोंकी धारणा इनके प्रति शिवकी ही है। स्नान कराते समय बांयें हाथको जल-हरीसे टेककर दाहिनेहाथसे भगवानपर जलदुग्ध-दधि आदि चढ़ा-कर, पुष्प-दूर्वा–चन्दनसे चर्चित करना चाहिये। पूजाके समाप्त होनेपर यात्रीगण भगवानका पंचामृत पानकर धन्य होते हैं। इसके बाद पण्डाजीसे सुफल लिया जाता है। इस तरह यथा-नियम, सर्व प्रकारसे पूजन समाप्त कर जब यात्री मन्दिरसे बाहर आते हैं, तब भादोंकी कड़ी धूपसे पृथ्वीका हृदय उत्तप्त हो

जानेके कारण चलते हुए यात्रियोंको बड़ा कष्ट होता है, क्योंकि देवदर्शनोंके लिये उन्हें नंगे पैर ही जाना पड़ता है। बहुत ही अच्छा हो यदि धर्मप्राण धनी महोदयोंका ध्यान यात्रियोंके मार्गश्रमको दूर करनेकी ओर जाय और वे मार्गके दोनों ओर मन्दिरसे लेकर धर्मशालातक पेड़ लगवाकर सुकीर्त्ति कमायें।

एक शिला-लेखके अवतरणोंसे सूचित होता है कि भुवनेश्वर भगवानका मन्दिर ७०० सात सौ वर्ष पहलेका बना हुआ है। श्रीजगदीश-मन्दिरकी स्थापना इससे पीछे हुई थी।

इसके बाद यात्री श्रीजगदीश-दर्शनकी यात्रा आरम्भ करते हैं। जिन्हें सन्ध्याकी गाड़ीसे जानेका निश्चय होता है वे भुवनेश्वर स्टेशनपर चार बजे ही पहुंच जाते हैं। प्रातःकालकी गाड़ीसे जानेमें कुछ असुविधा होती है। यहांसे यात्रियोंको लेकर जगदीशपुरीको जब गाड़ी रवाना होती है और साक्षीगोपालका स्टेशन दृष्टिगोचर होने लगता है तब यात्रीगण खिड़कियोंसे झांककर श्रीजगदीश मन्दिरके शिखर-स्थित नीलचक्रका दर्शन करनेके लिये व्यग्र तथा उत्कण्ठित हो जाते हैं। जिन्हें दर्शन हो जाता है, वे तो मारे आनन्दके फूले अंग नहीं समाते और जिन भोलेभाले सीधे यात्रियोंको दर्शन नहीं मिलता, उनकी एक मूल्यवान वस्तुसी खो जाती है—वे बेचारे बहुत खिन्न हो जाते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि जिन्हें चक्रका दर्शन नहीं होता, उन्हें मन्दिरमें भी मुश्किलसे प्रभु दर्शन देते हैं। परन्तु यह बात बिलकुल निर्मूल है। प्रभु अपनी शरणमें आये हुए

अपने सब भक्तोंको अपनाते हैं। उनकी दयासे सब लोग उनके दर्शन पाते हैं।

कुछ देरमें गाड़ी पुरी स्टेशनपर पहुंच जाती है। चारों ओरसे "जगदीशस्वामीकी जय" की अगणित आनन्द-ध्वनियोंसे आकाश गूंज उठता है। गाड़ी स्टेशनपर ठहरते ही चारों ओरसे पण्डे आकर यात्रियोंके साथ हो लेते हैं। उनके नाम–धाम-पता आदि पूछ करके अपना जजमान पहचान लेते हैं; जैसे वनसे चरकर आई हुई पिंजरापोलकी गौवें अपने बछड़ोंको झुंडमेंसे खोज लेती हैं। स्टेशनके बाहर गाड़ियां डटी रहती हैं। स्टेशन-से पुरी जानेमें यात्रियोंको किसी प्रकारकी असुविधा नहीं होने पाती। पुरीमें स्वर्गीय बाबू रामचन्द्रजी गोयनकाकी धर्मशालामें ठहरना बहुत ही आरामदायक और हर तरहसे यात्रियोंके लिये सुविधाजनक है। और चूरू निवासी सेठ कन्हैयालाल बागला आदिकी कई धर्मशालायें हैं।

पुरीयात्रा

—:x:—

(पहले दिनका कार्यक्रम)

धर्मशालासे बाहर निकलनेके साथ ही जो सड़क दाहिनी ओरको गई है, उससे कुछ दूर बढ़नेपर एक राह बायें हाथकी ओर जाती हुई मिलेगी। यहां पहुंचनेपर एक विचित्र दृश्य आंखोंमें पड़ता है। यहां करीब-करीब तीस बीघेके अहातेमें

स्फटिक-स्वच्छ निर्मल जलसे लहलहाता हुआ एक अतीव सुहावना सरोवर मिलता है। इसके चारों ओर सुखद-शीतल-छायावाले पेड़ लगे हुए हैं और सड़कोंकी सफाई और सजावटका तो कहना ही क्या है। जान पड़ता है कि यहांका परमार्थ-विहार-स्वच्छन्द-पद धारण ही जीवनकी परम पवित्र शान्तिका दाता है। और घाट भी यहां कुछ एक-दो नहीं है, अनेकों,—बंधे हुए,—बहुत ही मजबूत,सुदर्शन और परमानन्ददायी। इस तालाबको "चन्दन-तालाब" कहते हैं। इसके बीचमें एक मंदिर जलमें खड़ा हुआ बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता है। यात्री अक्सर पहले पहल इसी तालाबमें सानन्द मज्जन करते हैं। आचमन,अंग-मार्जन, प्राणायाम और तीर्थनमस्कारकर तीर्थ-गुरुओंसे यही यात्री अपना संकल्प करते-कराते हैं। कोई-कोई, जिनके हृदयमें भगवद्भक्तिकी अतिशयता है और जो परम श्रद्धा-भावसे यहां दर्शन-मज्जन और तीर्थ करनेकी लालसासे आते हैं, इस तालाबमें अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करनेके लिये सात गोते अलग अलग अपने इष्ट-अभीष्टोंको स्मरण करके लगाते हैं। पहला गोता वे अपनी आँखोंके तारे, परम प्यारे, भगवान श्रीरामचन्द्रजीके नामपर लगाते हैं। दूसरा गोता अपने परमाराध्य असाध्य-साधन करनेवाले भवभयसे छुटकारा करा देनेवाले श्रीगुरुके नामपर लगाते हैं, तीसरा गोता अपने लिये, चौथा गोता काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद आदि अपने शरीरको सदा ही सशंक किये रहनेवाले क्रूर रिपुओंके नाशके लिये। पांचवाँ इष्ट-मित्रोंके नाम-

पर, छठा पूर्वजोंको और सातवां अपने उद्धार, अपार भवसागरसे पार जानेके लिये। इसके बाद भगवान भुवनभास्कर देवकी जलपूर्ण अंजलिसे सेवा करके सूखे वस्त्र धारण कर उसी रास्तेसे वापस जाकर श्रीजगदीश मन्दिरमें यात्रीगण प्रवेश करते हैं। मार्ग चलते समय हृदयसे एक क्षणके लिये भी शान्ति अन्तर्धान न हो, इस ओर विशेष ध्यान रक्खा जाता है; क्योंकि वहां भिक्षुकोंकी संख्या इतनी ज्यादा है कि एक मुहूर्त्तके लिये भी उनसे पीछा नहीं छुटता। उनसे परेशान और हैरान होकर उन्हें बकना-झकना या कोई कठोर शब्द जबानसे निकालना अपने लिये और खासकर उस समयके धर्म-भावके लिए तो बहुत ही घातक है। यह सोचकर यात्री बड़ी शान्तिसे उस समय रास्ता पार करते हैं। जिन्हें यहांका हाल नहीं मालूम, उन्हें अपनेको खूब संभाले रहना चाहिये। शक्तिभर उन भिक्षुकों-को सन्तुष्ट करनेसे बाज न आना चाहिये। पाई-पैसा जो कुछ हो सके, उन्हें देना चाहिये।

जिस मार्गसे मन्दिरमें अधिकांश लोगोंकी आमद्-रफ्त रहती है, वह एक बहुत लम्बी-चौड़ी सड़क है। उसके दोनों ओर कतारकी कतार बड़ी बड़ी इमारतें खड़ी हैं और अच्छी अच्छी दूकानें भी हैं।

यहां चलते समय गंगा-यमुना नामकी गौवें यात्रियोंको बड़े प्रेमसे आकर घेर लेती हैं और मुंह हिलानेके इशारे उनसे घास मांगती हैं। उनके साथ घास बेचनेवालियां भी लगी रहती हैं। उनसे

घास मोल लेकर थोड़ीसी इन गौवोंको दे देनी चाहिये। घासके मिल जानेपर फिर वे गौवें आप यात्रियोंका पीछा छोड़ देती हैं।

यहांसे कुछ कदम बढ़नेपर भगवानके रथका दर्शन होता है। इस रथमें सोलह पहिये लगे हुए हैं। और यह ऊंचा भी कम नहीं है, आसमान चूम रहा है। इसी रथपर बैठकर भगवान जनकपुरकी यात्रा करते हैं। सालभर रथ यहीं रहता है। दूसरे साल जब नया रथ बनता है तब यह तोड़ दिया जाता है। इसे सभक्ति प्रणाम कर इसकी दाहिनी ओरसे श्रीभगवानके मन्दिरमें जाना चाहिये।

मन्दिरके विशाल द्वारके आगे काले पत्थरका बना एक बड़ा ही मनोहर कीर्तिस्तम्भ नजर आता है। यह स्तम्भ इस बातका सूचक है कि यहांसे श्रीभगवानका सिंहासन जितना ऊंचा है, यह उतना ही ऊंचा है। इसे भी प्रणाम करके मन्दिरमें इसको दाहिने भागमें लेकर जाना चाहिये।

साष्टांग प्रणाम करके द्वारमें खड़े होकर दाहिनी तरफ देखने पर भगवान श्रीपतितपावनके दर्शन होते हैं। अछूत जातियां यहींतक आने पाती हैं। अछूत जातियोंको अपने दर्शनोंसे पवित्र करनेके कारण ही इन्हें पतित-पावन कहते हैं।

यहांसे चलकर सीढ़ियोंपर बड़ी सावधानीसे देख देखकर चढ़ना चाहिये। फिर मन्दिर पहुंचनेसे जो अपूर्व शोभा आखोंको शीतल कर देती है,उसकी तो बात ही क्या है। आश्चर्यमें डालकर बड़ी देरतक मुग्ध कर रखनेकी शक्ति यहांके चारु-रचना-चम-

त्कारमें है। जी चाहता है कि इसी तरह तृप्त भावसे यहांकी विचित्र चित्रित चित्र-प्रसादिनी मन्दिर-कलाका निरीक्षण ही करते रहें। इस पर्वताकार विशाल मन्दिरके चारों ओर चार फाटक हैं। इनमेंसे, जहां देखिये वहीं—उसी द्वारपर यात्रियोंकी अपार भीड़ लगी रहती है। हर तरफसे आनन्द-गद्गद मधुर ध्वनि उठती सुन पड़ती है। हर एक यात्रीके मुखारविन्दपर प्रसन्नतादेवीकी पूरी कृपा बरसती रहती है। कहीं २ ऐसा भी नजर आता है कि अपनी भक्तिकी उमंगमें उमड़े हुए यात्री दंडवत करते हुए ही भगवानके दर्शनोंके लिये सोत्साह चले जाते हैं। यह तो अपने अपने हृदयकी प्रभुके कमल-चरणोंतक पहुंच जानेकी लालसा है। एक बातपर यात्रियोंको विशेष ध्यान रखना चाहिये। वह यह कि जिस समय भगवानका भोग लग रहा हो, उस समय दूरसे ही उनके दर्शन करना चाहिये। प्रभुके स्वरूपका ध्यान इस तरह है—रंग श्याम, मस्तकपर मुकुट, कानोंमें कुण्डल और ललाटमें चमकता हुआ हीरा। उनकी देह सुन्दर सुन्दर अमूल्य वस्त्रोंद्वारा आच्छादित है। विशाल बाहें भक्तोंको उपदेश और ज्ञानदानके लिये बढ़ी हुई हैं। श्रीजगदीश और बलभद्रदेवके बीचमें श्रीसुभद्राजी वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित खड़ी हैं। मूर्तिमें बलभद्रजीकी प्रकटित प्रतिमा तो देखने ही लायक है। यहां प्रभुके अत्युन्नत सिंहासनपर सिर झुका बार बार प्रणाम करना चाहिये। स्तव-स्तुतियोंसे भी श्रीभगवानके सन्तोषका विधान करना चाहिये। फिर परिक्रमा समाप्तकर बाहर आ जाना चाहिये।
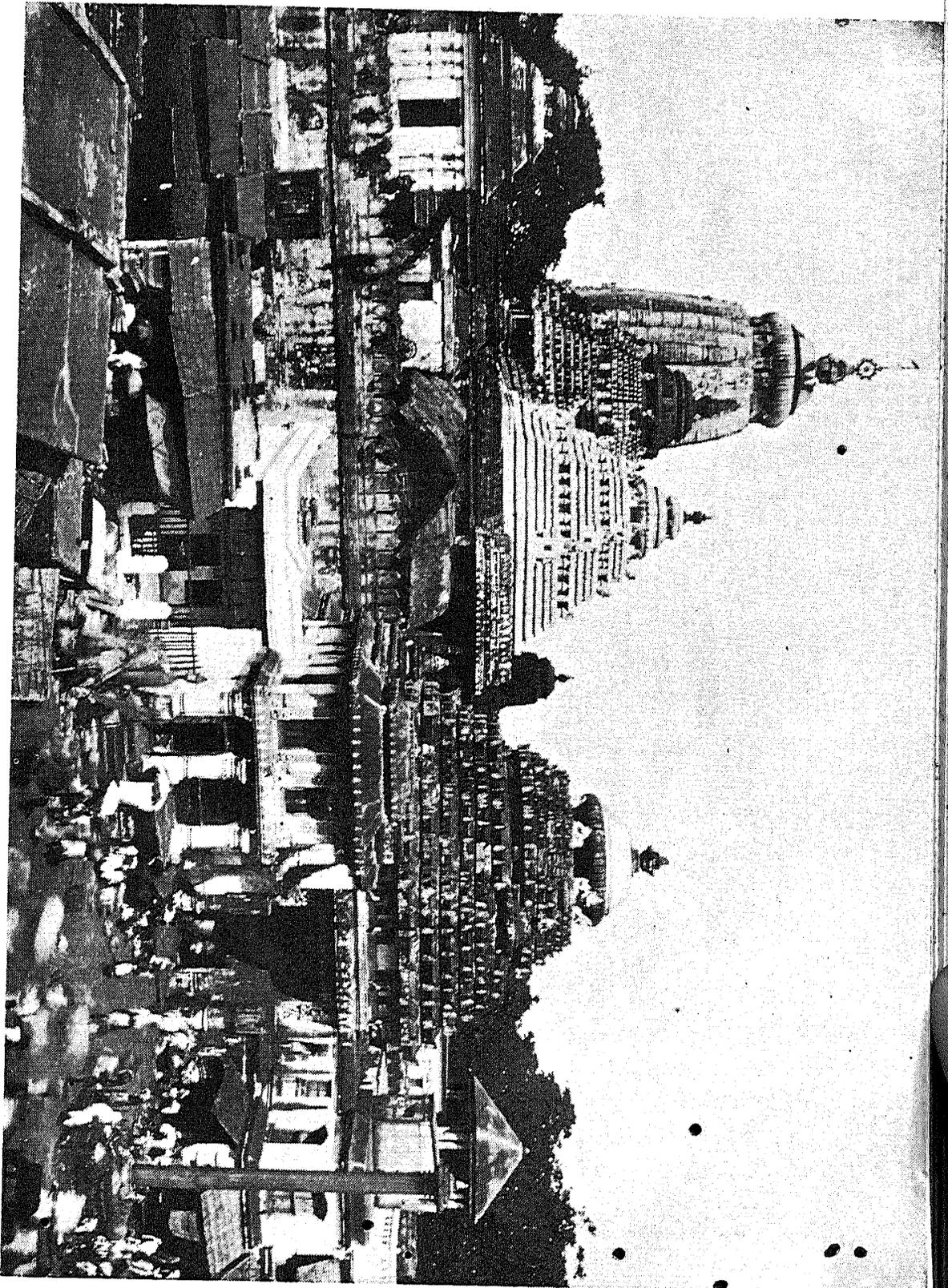
श्रीजगन्नाथ धाम।

मन्दिरके शिखरपर विचित्र कारीगरी है। वहां अनेक भावोंके चित्र दृष्टिगोचर होते हैं। यहांतक कि कलिकालकी लीला भी दिखाई गई है। शहरसे मन्दिरकी परिक्रमा करनेपर अनेकों मन्दिर, अनेक देवता और पास ही विशाल प्राचीन वटवृक्ष भी मिलता है। इस वृक्षको यात्री लोग बड़ी श्रद्धाके साथ आलिंगन करते हैं। पास ही साक्षी गोपालका मन्दिर भी है। यह मन्दिर छोटा है। यहीं एकादशीका भी स्थान है। यहाँ एक बड़ी अद्भुत बात सुननेको मिली। वह यह कि यहां लोग एकादशीका व्रत नहीं करते, बल्कि उस दिन एक भोग और लगता है।

यहांसे चलकर बगीचे और रसोवड़ा (भोजनागार) देखनेमें आते हैं। प्रसाद जहां बनता है वहां कितनी ही मिट्टीकी हंड़ियां चढ़ी रहती हैं। बड़े समारोहसे यहां भगवानका प्रसाद बनता है। आजकल प्रसादके सम्बन्धमें बहुत तरहकी आवाजें उठने लगी हैं। परन्तु भगवानका प्रसाद समझकर यात्रियोंको उससे किसी प्रकारकी अप्रसन्नता जाहिर न करनी चाहिये।

अस्तु, कुछ समयतक विश्राम करके फिर दिनके तीन बजेके करीब यात्रीगण जनकपुरकी यात्रा करते हैं। रास्तेमें किसी तरह भूलने भटकनेका भय नहीं है; क्योंकि राह सीधी है। जनकपुर पहुंचकर दर्शन समाप्त करके एक कुएंके पास यात्री जाते हैं। वहां पंडा जलसिंचन करता रहता है। उसीसे यात्रियोंका स्नान होता है। मन्दिरकी दीवारें भांति भांतिकी मूर्तियोंसे सुसज्जित और सुसंगठित हैं। यहां सुदामाजीकी मूर्तिपर

जब ध्यान जाता है तब हृदयको यह देखकर परम आह्लाद होता है कि धन्य है वह भाव कि भगवान श्रीकृष्णजीकी पटरानियां उनकी सेवामें लगी हुई हैं।

यहांसे समीपस्थ इन्द्रद्युम्न तीर्थपर पहुँचकर स्नान और मार्जन किया जाता है। यह पाँचों तीर्थोंमें प्रधान तीर्थ है। यहां एक सरोवर भी बहुत बड़ा है। घाट पक्के बने हुए हैं और यह २०।२५ बीघेके गिर्दमें फैला हुआ है। इसके ऊपर कितने ही मन्दिर और भी हैं। यहां अक्सर यात्रियोंको शाम हो जाती है। पर यात्री यहां ठहरते नहीं। वे शामको फिर जगदीशजीके दर्शनके लिये लौट जाते हैं। सायंकालके पश्चात् सात-आठ बजे रातको श्री-जगदीश-भगवानके दर्शन होते हैं। फिर शृङ्गार और शयन-समयके दर्शन रातको बारह बजे होते हैं। हृदयमें दर्शनोंकी जैसी अभिलाषा हो उसीके अनुसार प्रभुके दर्शन करना चाहिये।

दूसरे दिनका कार्यक्रम

दूसरे दिन मार्कण्डेय तीर्थपर मुण्डन, स्नान और पिण्ड-दानके पश्चात् मार्कण्डेयजीके दर्शनोंके लिये यात्री जाते हैं। मन्दिर तीर्थके ऊपर ही बना हुआ है। यहां पूजन समाप्त करके यात्री जगन्नाथ-स्वामीके दर्शन करनेके लिये मन्दिर चले जाते हैं। फिर दुपहर ढलनेपर तीन बजेके करीब समुद्रस्नान करते हैं। इसकी राह मन्दिरके सामनेसे होकर सीधी गई है। यहां समुद्र-तटतक ले चलनेके लिये सवारियां भी मिल जाती हैं।

समुद्र-तटकी तो शोभा ही निराली है। इसका वर्णन करना तो साधारण बुद्धिसे बाहरकी बात है। कालिदास जैसे महा-कवियोंका ही काम है कि ऐसे विराट और प्रशान्त भावकी प्रकृतिका वर्णन करें। विशाल तरङ्गोंकी भीम गर्जना, कल्लोल-कलित-कोलाहल सुनते ही बनता है। उस समय विराट भावकी मूर्त्ति आंखोंपर विशालताकी असीम महिमाके साथ छा जाती है। दर्शक कुछ कालके लिये मौन-मग्न हो जाते हैं।

यहां स्नान करते समय यात्रियोंको समझ रखना चाहिये कि समुद्रकी लहरकी ओर उनका मुँह न रहे। तटकी ओर मुख करके ही पीठपरसे तरंगको जाने देना चाहिये। यहाँ एक अद्भुत दृश्य नजर आता है। समुद्रके तटपर कुछ काले रंगके आदमी रहते हैं। ये कोपीन लगाये रहते हैं। बदन नंगा ही रहता है। ताड़के पत्तोंकी टोपियां बनाकर सिरपर दिये रहते हैं। ये यात्रियोंको अपनी पीठपर चढ़ाकर कुछ दूरतक समुद्रमें ले जाते हैं, अगर यात्री इन्हें आदमी पीछे चार आना देना मंजूर करते हैं। इन्हें कुछ देकर अगर कहा जाता है तो ये समुद्रमें कुछ दूरतक चले जाते हैं और तरंगोंपर लेटे हुए आनन्द-पूर्वक फिर तटभूमिमें आ जाते हैं। पानीमें ये अनेक प्रकारकी क्रीड़ाएँ भी दिखाते हैं। इनकी टोपियोंको उतारकर देखनेपर उसमें बीड़ियां, दियासलाई और बड़े बड़े अङ्गरेजोंके दिये सार्टि-फिकट भी मौजूद मिलते हैं। तारीफ तो यह कि ये लोग उन टोपियोंको लगाये हुए ही समुद्रमें तैरते हैं और उनकी टोपियाँ

पानीमें भींगती नहीं। समुद्र-देवकी पूजा करके यात्री मलूकदास-के मन्दिरमें आते हैं। यहां मलूकदासका टुकड़ा और कर्माबाई-की खिचड़ी पाकर लोग अपने डेरे लौट आते हैं।

तीसरे दिनका कार्यक्रम

इस दिन भी पहलेके दोनों दिनोंकी तरह दर्शन करना चाहिये। फिर दिनमें पंडाजी महाराजसे सुफल ले बेड़ी हनूमान जाना होता है। मार्गमें समुद्रतटपर सुन्दर सुन्दर बहुत सी कोठियाँ मिलती हैं। वहीं हनुमानजीका छोटासा एक मन्दिर है, जो उस जगह स्थापित है जहां जानेसे ही हृदयमें शान्तिका शीतल उद्रेक होने लगता है। यहाँ एक तीर्थ और है जिसे चक्र तीर्थ कहते हैं।

इस तरह तीन दिन पुरीमें निवास पूरा करके चौथे दिन सुबह होते ही स्टेशनपर पहुंच जाना चाहिए। सात बजे सुबहको पुरीस्पेशल छूटती है। इसपर सवार होकर बीचमें एक स्टेशन छोड़ यात्री साक्षीगोपालमें उतर जाते हैं। यहांसे साक्षी-गोपालका रास्ता मीलभर पड़ता है। कोई कोई पैदल जाते हैं, कोई सवारीमें। सवारी भी यहाँ मिलती है। रास्तेमें भोज-नका कुल सामान और सब्जी भी मिलती है। यात्री यहींसे अपने खाने-पीनेकी चीजें साथ खरीद लेते हैं। क्योंकि साक्षीगोपाल-में भोजन-पानका कोई सामान पूरी तरह नहीं मिलता। मीलभर

बाद एक धर्मशाला मिलती है। इसके मालिक भुवनेश्वर धर्मशालावाले ही हैं । यह एक तीर्थ-सरोवरके किनारे बनी हुई है। यहां स्नान आदि समाप्त कर पुष्प-चन्दन आदि लेकर यात्री श्रीसाक्षीगोपालके दर्शन करने जाते हैं। एकान्त स्थानमें प्रतिष्ठित होनेके कारण मन्दिरमें शान्तिदेवीका अबाध्य अधिकार है। कैसा ही चंचल मन क्यों न हो, पर यहाँ आते ही वह स्तब्ध शान्त हो जाता है। यहां साक्षीगोपालकी यथाविधि पूजार्चा करके भक्तिभावसे हाथ जोड़ यात्री लोग कहते हैं—हे भगवन्! हमारी यात्राके आप साक्षी हैं। मधुर मुरली धारण किये साक्षीगोपाल अनेक वस्त्राभरणोंसे सुसज्जित बड़े ही नयनाभिराम जान पड़ते हैं। रंग श्याम है। तदनन्तर परिक्रमा समाप्तकर मन्दिरके पश्चात् भागमें जाना चाहिये। वहां एक कुञ्ज है। इसकी सौन्दर्य-रमणीयता और लहलही शोभा देखकर आंखें कृतार्थ हो जाती हैं। कदम्बके सुन्दर दरख्त और मौलश्रीके फूलों-लदे पेड़ और भांति भांतिके द्रुम और लताएं दर्शकके हृदयको बराबर बस कर लेती हैं। जी चाहता है कि ललचीले लोचनोंसे यहांकी सुहावनी श्री की ओर एकटक ताकते रहें। यहाँ एक वृक्ष ऐसा है जिसमें विचित्र प्रकारके फूल लगते हैं। कहा जाता है कि यह पेड़ वृन्दावनके सिवा और कहीं नहीं है, एक यहीं यह मिलता है। यहां निर्मल सलिलसे इतराता हुआ एक सुन्दर सरोवर भी है। कुञ्ज-वनका अहाता भी बहुत बड़ा है। यहाँ ब्राह्मण पंडों हीका निवास है, दूसरी जातिके लोग इस कुञ्ज-वनमें नहीं रहते।

यात्री यहाँ दिनभर विश्राम करके रातके आठ बजनेसे पहले ही स्टेशनपर आ जाते हैं। यात्रियोंको यहाँ सवार होकर खुर्दा स्टेशनमें उतर जाना पड़ता है। यहाँ यात्रियोंको रातमें कलकत्तेसे छूटा हुआ मद्रास-मेल मिलता है। दूसरे दिन प्रातः-कालके पश्चात् दिन १० बजेके करीब गाड़ी वाल्टियर स्टेशनपर पहुँचती है। यात्रियोंको प्रसाद यहीं धारण कर लेना चाहिये। गाड़ी आधा घंटा यहाँ रुकती है।

रातको १० बजे गाड़ी बेजवाड़ा जंकशन पहुंचती है। यात्रि-योंको यहाँ उतर जाना चाहिये। पास ही एक धर्मशाला है। यहाँके मैनेजरसे मिलकर धर्मशालाके ऊपर ठहरनेका प्रबन्ध करना चाहिये ; क्योंकि आराम वहां अधिक मिलता है। रातभर सुखसे विश्राम करके सूर्योदयसे पहले उठकर स्टेशनपर पहुंच जाना चाहिये। यहांसे मंगल-गिरिके लिये एक आनेका टिकट मिलता है। गाड़ी छोटी लाइनकी तैयार ही खड़ी रहती है,उसीसे मंगल-गिरि जाते हैं, इसे प्रन्नानरसिंह तीर्थ कहते हैं। बीचमें एक स्टेशन छूटकर आगे मंगल-गिरि स्टेशन मिलता है। मंगलगिरि और प्रन्नानरसिंह तीर्थ यहांसे एक मील पड़ता है। यहां पहाड़ है जिसके पास ही एक क्षेत्रम् है। इसे धर्मशाला कहते हैं। यहां ठहरकर स्नानआदिसे निवृत्त हो जाना चाहिये। मंगल-गिरि पहाड़पर स्थित है। पहाड़पर चढ़नेसे पहले पंडाजी महाराजसे गुड़का शरबत जितना अपनेसे हो सके तैयार करा लानेके लिये कहना चाहिये। मंगल-गिरिकी सीढ़ियाँ बड़ी

साफ और सुन्दर हैं। चढ़ते हुए किसीको कष्ट नहीं होता। बालक, वृद्ध, और स्त्रियां आरामसे ऊपर चढ़ जाते हैं। सीढ़ियोंकी संख्या ५०० होगी। ऊपर कमेटीके दफ्तरमें पूजन करनेका कर चुकाया जाता है। फिर मन्दिर-प्रवेशकी वारी आती है। मन्दिरके भीतर अँधेरा छाया रहता है। भगवान प्रन्नानरसिंहकी मूर्ति पर्वतके भीतर देख पड़ती है। पंडेलोग पूजन कराकर एक शंखमें शरबत भरकर प्रभुके मुखमें छोड़ते हैं। पान कराते-कराते आधा शरबत बचनेपर पिलाना बन्द कर देते हैं। इसके विषयमें कुछ भोलेभाले लोगोंका यह कहना है कि भगवानके निकट जितना शरबत जाता है उसका आधा ही प्रभु पीते हैं और आधा अपने भक्तोंके लिये रख छोड़ते हैं। परन्तु यह बात युक्तिको नहीं जंचती। पंडे लोग खुद आधा शरबत रख छोड़ते हैं। परिक्रमा करके पर्वतपर खड़े होकर वनकी शोभा देखिये तो हृदय पुलकित हो जाता है। हरेभरे पेड़-पल्लवोंकी निराली ही छटा देखनेमें आती है। यहांकी विचित्र बात एक यह है कि रोज मनों शरबत जमीनपर गिरते रहनेपर भी मक्खी कहीं एक भी नजर नहीं आती। और हजारों मन शरबत प्रभुके मुखपर ढाला जानेपर भी कहींसे शरबत बहता हुआ नहीं देख पड़ता।

इसके बाद यात्रियोंको उतरकर कृष्णा नदीके तटपर आना चाहिये। पर्वतसे नदीके किनारेतक जानेके दो मार्ग हैं। एक तो गाड़ियोंमें बैठकर रेलवे पुलके पाससे जानेका और दूसरा जिस गाड़ीसे चढ़कर यात्री आते हैं उसकी राहसे। कृष्णा नदीमें

नहाते समय यात्रियोंको बहुत सावधान रहना चाहिये। यह नदी बड़ी वेगवती है। इसका महत्व भी बहुत है।

इसके पश्चात् दिनमें यहांका नगर-निरीक्षण करना चाहिये। रात्रिको मद्रास मेल फिर मिलता है। उसीसे मद्रास रवाना हो जाना चाहिये। गाड़ी रातभर चली जाती है। सुबह आठ बजे मद्रासकी बड़ी स्टेशन सेन्ट्रलमें उतार देती है।

मद्रासकी सैर

मद्रासमें आना सिर्फ सैरके लिये ही नहीं, किन्तु इसे भी एक धर्मक्षेत्र समझ लेना चाहिये। यह प्रान्त दिव्य देश कहलाता है। यहांके विद्वान तामिल भाषामें कहते हैं—"कु॑ द्राविड़म् धर्मः" यानी धर्मका ह्रास होनेपर भी यहां कुछ न कुछ धर्म बना ही रहेगा। इस शहरकी सैरके लिये कमसे कम यहां तीन दिन ठहरना चाहिये। यहां ठहरनेके लिये भाटियोंकी बनाई एक धर्मशाला स्टेशनके पास ही है। परन्तु यात्रीगण अक्सर साहूकार-पैठमें उतरा करते हैं। यहां पंचायती क्षेत्र भी बने हुए हैं। सेठ वंसीलाल अबीरचन्दका क्षेत्रम् (धर्मशाला) में इच्छानुसार ठहरना अच्छा है। मद्रासमें सबसे पहले श्रीबालाजीके दर्शन करना उत्तम है। यह स्थान साहूकार-पैठके पास ही चीना रोडमें है। यह मन्दिर बहुत प्राचीन और आचारियोंका मुख्य तीर्थ

है। बालाजीके दर्शन बहुत ही अद्भुत तौरसे होते हैं। यह मूर्ति श्यामवर्ण और हाथमें खड्ग धारण किये हुए है। ललाटमें हीरा चमक रहा है। आरतीके समय देखनेपर यह स्वरूप बड़ा ही तेजस्वी प्रतीयमान होता है। परिक्रमाके समय श्रीहनूमानजी और लक्ष्मीजीके दर्शन मिलते हैं। सभामन्दिरके पीछे एक नाला मिलता है। इससे होकर बालाजीके स्नानका तीर्थ जल आता है इस जलको यात्रीलोग नेत्र और हृदयमें लगाते हैं। पास ही एक चरणचिन्ह मिलता है। यहां दो खंभोंमें सिंहकी मूर्तियां बनी हुई हैं। हरएक शेरके मुखमें गोला पड़ा हुआ है। यह हाथसे हिलानेपर लुढ़कता रहता है। यह भी भारतीय कारीगरीका एक अद्भुत नमूना है। यहीं घुंटा नामका एक और तीर्थ है। पास भगवानके प्रसादकी एक दूकान लगी हुई है। इसमें खट्टा भात, दही-बड़े आदि मिलते हैं। यहांसे चल-कर नृसिंहजीके दर्शन करके श्रीसीतारामजीके दर्शन करना चाहिये। यहांके मालिक बाबा जानकीदासजी बड़े सच्चरित्र सुबोध साधु हैं। दिनके दो बजेके पश्चात् सवारीमें बैठकर तृमली केनि नामक जगहमें भगवान पार्थ-सारथीके दर्शन करने चाहिये। किसी समय अर्जुनके रथको यहीं श्री भगवानने खड़ा किया था। यह मन्दिर बहुत बड़ा है। द्वारपर बाजार लगता है। यहां अनेक प्रकारकी चीजें मिलती हैं। सभामन्दिरमें प्रवेशकर भगवानके दर्शन कर धन्य होना चाहिये। यह मूर्ति बहुत बड़ी है। रङ्ग श्याम, खड्ग धारण किये, ललाटमें त्रिपुण्ड्र,

हीरे-जवाहरात और मूल्यवान आभूषणोंसे सुसज्जित। प्रभुकी अर्चनाके समय यात्री लोगोंसे नाम-धाम और गोत्र आदिका विवरण सुनकर पण्डा लोग सहस्र नामसे तुलसीदल श्रीप्रभु-पर चढ़ाते हैं। आरती करनेके बाद सोने-चांदीका टोप प्रभुके चरणोंमें रखकर यात्री उसे मस्तकपर लगाते हैं। इस समय अपनी पगड़ी सिरसे उतारकर हाथमें ले लेना चाहिये। प्रसाद पाकर बाहर आनेपर एक पक्का सुन्दर तालाब दृष्टिगोचर होता है। यह इतना सुन्दर है कि जीवनमें शायद ही कभी ऐसा मनोहर तालाब देखनेको मिलता है

यहांसे लोग समुद्र-तट देखने जाते हैं। अपर स्थानोंसे समुद्र-तट भी यहां अधिक सुहावना लगता है। यहांसे यात्रियोंको मच्छी कालिज देखना चाहिये। इसके भीतर जानेकी फीस ≠) है। हर एक आदमी पीछे यह फीस बंधी है। इसके भीतर बाईं ओर बड़ी सुन्दर सुन्दर मछलियां देख पड़ती हैं और परमात्माकी कारीगरीपर कृत्रिमकारीगरी निछावर कर देनेको जी चाहता है। यहां दो मछलियां ऐसी हैं जो सर्पाकार और बहुत ही जह-रीली हैं। कांचकी दीवारोंमें पानी भरा रहता है और मशीन द्वारा गैस भी भरा जाता है। इसके सहारे मछलियां जीती रहती हैं। इनके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकारकी मछलियां देखनेमें आती हैं। सप्तधातुओंके रङ्गकी मछलियां देखकर तो आश्चर्य्यका ठिकाना नहीं रहता। एक प्रकारकी छोटी मछलियां हैं जिनमें छोटे-छोटे दाग लगे होते हैं। इन मछलियोंका रङ्ग गिना ही नहीं

जा सकता। इसमें कुछ संख्या ऐसी मछलियोंकी भी है जिनका रङ्ग धूप-छायाकी तरह बदलता ही रहता है। एक मछली ऐसी है जिसके आंखें तो दो हैं, लेकिन प्रकाश बारी बारीसे उनमें आता रहता है। मानो एक आंखमें जब प्रकाश आयेगा तब दूसरेसे वह नहीं देख सकती। एक मछली ऐसी है जिसकी देहमें तमाम आंखें ही आंखें हैं। किसी किसी मछलीमें मोरकी तरह छोटे छोटे पंख लगे रहते हैं और आनन्दपूर्वक वे उन्हें फैलाती-सिकोड़ती रहती हैं। एक मछली ऐसी भी देखनेमें आई जिसका आकार घोड़ेका-सा है। इस प्रकार यहां सैकड़ों प्रकारकी मछलियां हैं। इन्हें देखकर ईश्वरकी अपार सृष्टि-लीलापर कुछ देरके लिये दर्शक हर्षविभोर होकर तल्लीन रह जाता है। इस विशाल समुद्रके अन्धकारगर्भमें न जाने ईश्वरकी कितनी अजीव सजीव सृष्टि जारी है। इस कालिजमें जो मछलियां रक्खी हैं, वे यहींके समुद्रोंकी नहीं, किन्तु दूसरे देशोंसे भी लाई गई हैं। इनके नाम और देश अंगरेजी भाषामें लिखे हुए हैं।

समुद्र देखते हुए चले जानेपर बाईं और दाहिनी ओर नीहारनीय कैसा सुहावना तट है। दाहिनी ओर समुद्रदेव गरज रहा है। सड़क और फुटपाथकी सजावट देखनेयोग्य है। बगीचे लगे हुये हैं, जो समुद्रदेवकी पवित्र वायुसे मरते नहीं। जगह जगह बेंच बिछे हुए हैं। बिजलीके खम्भोंकी सजावट ऐसी है कि मोती पड़ा मिल सकता है। सड़ककी बाईं तरफ बड़े बड़े महल बादशाहोंके जमानेके बने हैं। इसके बाद मद्रासका किला मिलता

है। यह भी कलकत्तेके किलेकी तरह पृथ्वीके गर्भमें बना हुआ है। इसके आगे बढ़नेपर मद्रासका हाईकोर्ट देख पड़ता है। ऐसा भव्य और विशाल हाईकोर्ट भारतमें और कहीं नहीं है। इस हाईकोर्टकी कारीगरी ही कुछ विचित्र ढङ्गकी है। यह हाईकोर्ट कई सौ वर्षका बना हुआ होगा। अभी कहीं मरम्मत नहीं की गई है।

यहांसे समुद्रतटकी ओर देखिये तो एक बड़ा भावगर्भित दृश्य देखनेमें आता है। ट्राम डीपूके पास संगममरकी एक शिलापर अंग्रेजीमें जर्मन जहाज एमडनकी कीर्ति लिखी हुई है जिसने गोलाबारी करके हाईकोर्टको उड़ा देना चाहा था। उसका निशाना हाईकोर्टका था, लेकिन निशाना कुछ चूक जानेके कारण गोला पासहीकी किरासिन तेलकी टंकियोंमें पहले लगा और फिर उन्हें पार करता हुआ हाईकोर्टके एक जंगले-को चकनाचूर कर डाला। हाईकोटका गुम्बज बहुत ऊंचा है। इसमें नक्काशी भी बड़ी सुन्दर है। ऊपर सर्चलाइट भी लगी हुई है। इसके ऊपर चढ़कर समुद्र और सड़कों और मद्रासके अपर स्थानोंके बड़े आकर्षक दृश्य देखनेमें आते हैं, नेत्र स्थिर हो जाते हैं। ऊपर चढ़नेकी फीस ≠) है। वहांके जज भी यदि देशी हैं तो त्रिपुण्ड्र अवश्य ही मस्तकपर धारण करेंगे। उनका धर्मा-भिमान देखकर और भी हर्ष होता है। यह खास दृश्य देखनेके लिये यात्रीगण हाईकोट अवश्य जायं।

दूसरे दिन यहांका अजायबघर देखना चाहिये। कलकत्तेका अजायबघर बहुत बड़ा कहलाता है। यह चाहे सच हो क्यों न

हो, परन्तु यहांके अजायबघरमें जिस तरहकी तअज्जुब डाल देनेवाली चीजें देखनेमें आती हैं, वैसी और कहीं नहीं। यहांतक कि नुमायशोंमें भी ये चीजें देखनेको नहीं नसीब होतीं। रानी बागमें तरह तरहके जानवर हैं, जिनमें एक भालू इतना बड़ा है कि वैसा शायद ही कहीं दूसरी जगह हो।

इसके बाद शामके वक्त पचेपास स्कूलके ऊपर आनेपर बहुत बड़ी संख्यामें लोग इकट्ठे देखनेमें आते हैं। चारों ओरसे ट्राम-गाड़ियोंकी आमदरफ्त लगी रहती है। यहींसे ट्रिलिपकेनको ट्राम-गाड़ी जाती है। पार्थ सारथीका मन्दिर यहींपर है। यहींसे ट्राम-गाड़ी रायपुरम्को भी जाती है, जहां गल्लेकी गुदामें हैं और व्यापारका केन्द्र है। इसी जगह हार्बर यानी बन्दरगाह भी है। देश-देशान्तरोंके बड़े-बड़े जहाज यहीं आकर खड़े होते हैं। पचे स्कूलसे ट्राम महिलापुरम्को भी जाती है। वहां एक बड़ा भारी शिवमन्दिर और एक तीर्थ है। इसके बीचके मार्गमें माउण्टरोड है जो बहुत ही सुन्दर बना हुआ है। यहां गवर्नर साहब बहादुर-की कोठी और अनेक सरकारी आफिस हैं।

पचेपाससे ही पुरुषवाकम्को ट्राम जाती है। यहां बड़े बड़े डाक्टर और बारिस्टर लोग रहते हैं। यहां हरे-भरे अनेक बाग-बगीचे भी हैं। पचेपासके समीप ही एक गडङ्ग गली है। यहां कपड़ेका मुख्य बाजार है। यहीं गोविन्द अप्पा स्ट्रीट है जहां किरानेका व्यापार होता है।

यहांसे कुछ दूर पच्छिमकी ओर चलनेपर गुदरी बाजार

मिलता है। यहां खुदरा कपड़ा बिकता है। अन्यान्य वस्तुओंकी दूकानें भी यहांपर हैं। इस बाजारमें दो मन्दिर भी देखने लायक बड़े रमणीक हैं, एक है विष्णुभगवान्का और दूसरा श्रीशिव-जीका। शामको यहां फूल बहुत बिकते हैं। स्त्रियोंके लिये हजारों-की संख्यामें लोग यहां फूलमालाएं खरीदते हैं। सौभाग्यवती देवियोंके लिये यहां एक प्रकारका फूलोंका आभूषण बनता है जिसे गरीबसे गरीबको भी अपनी स्त्रीके सिरपर धारण करानेका शौक है। यहीं एक जगह रत्नोंका भी बाजार है। यहां रत्नोंके आभूषण बिकते हैं।

इससे कुछ ही दूर आगे चलनेपर साहूकार-पठ मिलता है। अंग्रेजीमें इसे मिट स्ट्रीट कहते हैं। यह स्थान मद्रासमें उतना ही महत्वपूर्ण और मनोरम समझा जाता है जितना फ्रान्समें पेरिस। मद्रासके जुलूस और देवताओंकी सवारियां यहां जरूर आती हैं। यहां चीनारोड और साहूकार-पैठके बीचमें एक रास्ता है। उस-पर शामको बड़ी चहल-पहल रहती है। एक ओर गणपतिमंदिर है दूसरी ओर माता कुड़ि (मन्दिर)। यहांभी लोगोंकी अपार भीड़ होती है। मन्दिरके सामने कुछ स्त्रियां मीठा-चावल कण्डेकी आगमें पकाकर बड़े श्रद्धाभावसे माता कुड़िमें भोग लगाकर ले जाती हैं। माता-कुड़िके प्रति इधरके लोगोंकी बड़ी श्रद्धा और भक्ति है। चलता-फिरता हुआ आदमी भी यहां माता-कुड़िके मन्दिरके सामने आनेपर, खड़ा हो, अपने सिरमें घूसे लगा, कान पकड़कर नाचने लग जाता है। यहीं सनातनधर्मके प्रति लोगों-की प्रगाढ़ श्रद्धा देखनेमें आई।

यहांसे फिर साहूकार-पैठकी ओर चलना चाहिये। पीछे भी साहूकार-पैठ पड़ता है। साहूकार-पैठमें प्रवेश करते ही दोनों ओर सोने-चांदीकी दूकानें देखनेमें आती हैं। सोने-चांदीके जेवर और तरह तरहके पात्र तथा गिन्नी मोहर आदि यहां बिकते रहते हैं। यहांके व्यापारी मारवाड़ी सज्जन अधिक हैं। गिन्नीके दलालोंका यहां खासा जमाव रहता है। मद्रासमें सट्टा फाटका या दलाली जो कुछ कहिये गिन्नियोंकी ही होती है। दूसरी चीजोंका फाटका यहां नहीं होता। यहां मारवाड़ प्रान्तान्तर्गत जोधपुर, नागौर, आदिके रहनेवाले ओसवाल और गोलवाड़ भाइयोंके हाथमें ही व्यापारकी बागडोर है। इस पैठमें कलकत्ता, बम्बई आदिकी तरह इमारतें नहीं हैं। ज्यादासे ज्यादा दो तल्लेके मकान बनते हैं। यहां विचित्रताकी दृष्टिसे केवल एकही मकान लाल पत्थरोंका बना हुआ है। इसके बुर्जपर सर्चलाइट लगी हुई है। यह इमारत बीकानेर-निवासी रायबहादुर सेठ वंशीलाल अबीरचन्दकी बनायी हुई है।

इस स्थानसे कुछ ही दूर चलनेपर उस्तादका अखाड़ा मिलता है। यहां उस्तादके चेले भंग तैयार रखते हैं। इसके लिये कुछ देना नहीं पड़ता, परन्तु यात्रियोंको थोड़ेसे ही सन्तोष करना चाहिये। कुछ दूर चलनेपर बाईं ओर प्रिय नायका लेन पड़ती है। यहींपर श्रीवेंकटेश दातव्य औषधालय है जिसमें चूरूनिवासी वैद्य कन्हैयालाल शर्मा चिकित्सा करते हैं। यहां मुफ्तमें दवा मिलती है। यदि मुफ्तमें किसीको दवा लेनेमें एतराज हो

तो फण्डमें कुछ देकर दवा ले सकते हैं। इसके बाद नथमल्ल शर्माकी मिठाईकी दूकान मिलती है। इस दूकानकी मिठाई बड़ी पवित्रतासे बनाई जाती है। इस पैठमें तीन-चार भोजनालय भी हैं। यात्री लोगोंकी इच्छा और रुचि हो तो वे यहां भोजन कर सकते हैं। पास ही एक चौराहा मिलता है। साहूकार- पैठ यहींपर समाप्त होता है।

इसके बाद चंगा-बाजार पड़ता है। यहां पोस्ट आफिस, मद्रासका बोर्ड और सनातनधर्म-विद्यालय है। यहां मारवाड़ी, देशी और गुजराती बालकोंको शिक्षा मिलती है। यह सड़क यहां मीलों सामने चली गई है।

मद्रासकी गोशाला भी एक देखनेकी जगह है। ५००-६०० गौएं अलग-अलग रस्सियोंसे बंधी यथेष्ट भोजन पाती हैं। प्रबन्धकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। इसका अनुकरण यदि दूसरी जगहकी गोशालाओंमें कराया जाय या किया जाय तो बड़ा अच्छा हो।

मद्रासमें साहूकार गुजराती भाइयोंद्वारा तीन संस्थाएं चलती हैं। पहली तो है गोशाला, दूसरी संस्था विद्यालय और तीसरी संस्था दातव्य औषधालय है। यह अभी हालहीमें खुला है। यह प्रान्त ग्रीष्म-प्रधान है। परन्तु फिर भी यहां शीतल वायु सदा ही प्रवाहित होती रहती है। जब हमारे यहां बारिश होती है, उन दिनों यहां पानी नहीं बरसता। किन्तु शीत कालमें यहां वर्षाका समय आता है। शीतमें सर्दी नहीं पड़ती। यहांका

मुख्य भोजन चावल और कठ है। कठ इमलीके पानीसे बनता है। यही भोजन कर यहां लोग प्रसन्न रहते है। यहां अय्यर और आयङ्गर नामकी दो ब्राह्मण-जातियां हैं। इनका वर्ण गौर, सुन्दर और मुखपर तेज चमकता रहता है। इनके सिवा और जातियों-के लोग काले ही काले दिखाई देते हैं। मद्रासमें भारतके अन्य देशोंकी भांति सड़कोंपर मांसको दूकानें नहीं लगने पातीं, न यहां कलकत्ता, बम्बई आदि शहरोंकी तरह वेश्याएं खुल्लमखुल्ला बाजारमें बैठने पाती हैं। उन्हें घरके अन्दर छिपकर ही रहना पड़ता है। यहां मुसलमानोंकी आबादी बहुत कम है। आपसका बर्ताव और स्त्री-पुरुषोंका मनोभाव तो यहां बहुत ही पवित्र है। दृष्टि-दोष बहुत कम है। स्त्रियोंमें परदेका रिवाज बिलकुल नहीं है।

जिन यात्रियोंको यहांसे रामेश्वर जाना है, उन्हें चाहिये कि आटा, घी और खाने-पीनेकी सामग्री कमसे कम १५ दिनोंके लिये यहांसे साथ लेते जायं। उन्हें मद्रासके इगमोर नामक स्टेशन-पर सन्ध्याको ७ बजेसे पहले पहुंच जाना चाहिये। छोटी लेनकी गाड़ी रातके ८ बजे यहांसे छूटती है। उसीपर सवार हो साढ़े दस बजे चिंगल पीठ जंक्शन उतर जाना चाहिये। यहांसे ६ फर-लांगपर एक धर्मशाला है। रातको यहीं लोग ठहरते हैं। सुबह घोड़े-गाड़ियोंसे लोग पंछी-तीर्थकी यात्रा करते हैं।
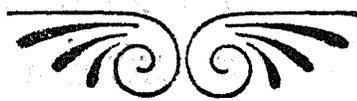
पंछी-तीर्थ
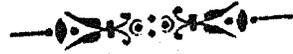
पंछी-तीर्थका मार्ग पर्वत-मालाके कारण दृश्योंसे भरापूरा, आंखोंको धरित्रीकी स्निग्ध श्यामल छटासे शीतल करनेवाला है। राहकी दोनों बगल मनोहर लहलहे पेड़ोंकी अपूर्व शोभा है। पर्वत-मालाकी मधाकार मुग्धकर मधुर दृश्यावली देखकर एकान्त-प्रवासी तीर्थयात्रियोंका हृदय-संताप तत्काल दूर हो जाता । भक्तिभावनाकी तरल तरंगोंमें बहता हुआ हृदय सब तरहके दुःख कलि-कलुषोंसे मुक्त हो जाता है। उसे चारों ओर एक स्वर्गीय सुषमाकी स्निग्ध लुब्धकारी प्राकृतिक छटा दिखाई पड़ती है। वह अपना-पराया सब भूलकर भक्तिके आवेशमें तन्मय हो जाता [illegible] तरह दस मील रास्ता पार कर चुकनेपर पंछी-तीर्थ मिलता है। यहां शंखतीर्थ नामका एक बहुत बड़ा तालाब है। इसमें स्नान करके यात्रियोंको पंछी-तीर्थके पहाड़पर चढ़ना चाहिये। इस पहाड़पर चढ़नेके लिये उन्हें ५०० सीढ़ियोंके लगभग पार करना होगा। पर्वत-शिखरपर एक शिव-मन्दिर है। यहां ११ बजनेपर पण्डा मीठे चावलोंको पकाकर घण्टी बजाता है, जिसकी आवाज सुनकर एक खास किस्मके सफेद रंगके पक्षी आ जाते हैं और पण्डेके हाथसे मोठा भात खा और पानी पीकर फिर उड़ जाते ह। यात्रियोंमें इन्हींका जूठा प्रसाद थोड़ा थोड़ा बांट दिया जाता है। भोले भाले यात्री बड़ी श्रद्धासे इस

प्रसादको ग्रहण तो कर लेते हैं, परन्तु ऐसा करना कई दृष्टियों-से उचित नहीं। ये पक्षी सफेद चीलकी तरहके मांसाहारी जान पड़ते हैं। इनके विषयमें पण्डे लोग कहते हैं कि ऋषियोंने ही पक्षीका रूप धारण किया है। ये प्रयागमें तो स्नान करते हैं; यहां भोजन करते हैं और फिर रामेश्वरमें जाकर शयन करते हैं। परन्तु गांववालोंसे पूछनेपर मालूम होता है कि ये यहींके पालतू पक्षी हैं। तीर्थकी दृष्टिसे यहां शंखतीर्थ और शिव मन्दिर ही प्राचीन और माननीय है।

पंछीतीर्थसे लौटकर फिर धर्मशालामें आ जाना चाहिये। दिनभर विश्रामकर ११ बजे चिंगलपीठ स्टेशनपर आ जाना चाहिये। यहांसे चलकर सुबह सात बजे गाड़ी चिदम्बर स्टेशनपर पहुंचती है। यहां उतर जानेपर बाहर बैलगाड़ियां मिलती हैं। बैलगाड़ीको इस देशमें बंड़ी कहते ह। यहांसे चलनेपर डागोंकी धर्मशाला मिलती है। मुकाम यहीं करना होता है। यहांसे स्नान आदि समाप्त करके चिदम्बरम्‌के दर्शनोंके लिये बाहर निकल जाना चाहिये।

चिदम्बर तीर्थ

—:०:—

इस मन्दिरका विस्तार बहुत बड़ा सैकड़ों बीघे घेरकर है। इसमें चार दरवाजे हैं, सबके सब सजे–बजे आँखोंमें प्राचीनताका

विचित्र गर्व-गौरव भरते हैं। मन्दिरके खुले मैदानमें त्रिपुण्ड्र-धारी हाथी स्वच्छन्द झूमता हुआ देख पड़ता है। इससे कुछ कदम और आगे बढ़नेपर यात्रियोंको सुदृढ़ोन्नत विशाल मन्दिर-की अपूर्व शोभा देखनेको मिलती है। हृदय इसकी सत्यतापर बरबस मुग्ध हो जाता है। मन्दिरके सामने स्वच्छ जल भरा सुविस्तृत एक तालाब मिलता है, इसे शिवगंगा कहते हैं। यहां अंग-मार्जन प्राणायाम् और अंजलिदानके अनन्तर बाहर निकलने-पर एक नन्दिकेश्वर दिखाई पड़ता है। इसके पास ही एक तीर्थ-स्तम्भ हैं। इन दोनोंके दाहिने भागसे प्रणाम करते हुए मन्दिरकी ओर बढ़ना चाहिये। मन्दिरके शिखर-देशपर जो कलस लगे हुए हैं, इन्हें प्रणाम कर सभा-मन्दिरके पास जाइये तो चांदी-की बनी सीढ़ियां नजर आयेंगी। सभा-मन्दिर यही है। मन्दिरके भीतर भगवान भूतभावन चिदम्बरम् महादेव ताण्डव-नृत्यमें तन्मय देख पड़ते हैं। इनके दर्शनोंसे भक्तजनोंके हृदयमें आनन्द-का सागर हिलोरें भरने लगता है। तीनों ताप नष्ट हो जाते हैं, चित्तमें स्वर्गीय प्रसाद भर जाता है। श्रीमहादेवजीके पास एक परदा है इसमें सुवर्णनिर्मित कई मालाएं लटक रही हैं। बहुतसे यात्रियोंको तो इनके द[illegible] मलते ही नहीं। पण्डाजीको कुछ दक्षिणा देनेपर दर्शनोंकी दुर्लभता दूर हो जाती है। चिदम्बरम् महादेवको ही आकाश लिंग कहते हैं। दक्षिणमें शिवजीकी अपार दया है। पंचों तत्वोंके पांच लिंगोंके दर्शन दक्षिणमें ही सुलभ हैं। चिदम्बरम्में यह माला-रूप ही आकाश-लिंग है। शिव-कांचीमें

पृथ्वी लिंग, श्रीरंगजीमें अपो (जल) लिंग, अरुणाचलमें अग्नि-लिंग और कालास्त्रीमें वायु-लिंग मिलता है। यात्रियोंको इन पांचों तत्वोंके शिव-लिंगोंके अवश्य ही दर्शन करने चाहिये।

इस मंदिरमें एक और विचित्र दृश्य देखनेको मिलता है। दिनमें ११ बजेके पहले दो शिव-मूर्तियां, जिनमें एक तो माणिक्यकी और दूसरी जलहरी-सहित स्फटिक मणिकी बनी हुई है, देखनेमें आती हैं। इनके पास स्वर्णसे मढ़ा हुआ दक्षिणावृत्ति शंख रक्खा है। इस तरहका दक्षिणावृत्ति शंख भारतवर्षभरमें नहीं देख पड़ता। इन दोनों मूर्तियोंकी पूजन-विधि वेदमन्त्रों और वेद-विधिके अनुसार होती है। अवशेष समाप्त होनेपर माणिक-मूर्तिके पीछे कपूरकी बत्ती जलाकर प्रकाश किया जाता है तो शिव-भगवान् ताण्डवनृत्य करते हुए देख पड़ते हैं। माणिक्य-मूर्ति अन्दाजन एक फुट लम्बी होगी। इसके पश्चात् शेषशायी भगवानके दर्शन कर डेरेपर वापस आ जाना चाहिये। पराह्नकालके चार बजेके बाद नगर-निरीक्षण करके चित्तकी प्रसन्नता बढ़ानी चाहिये। लाल लाल सड़कोंके दोनों ओर नारियलके पेड़ोंकी लम्बी कतारें बड़ी ही सुहावनी मालूम होती हैं। इस नगरमें प्रायः सभी जातियोंके लोग बसते और इसकी आबादी अनुमानतः ६००० घरोंकी होगी। इनमें ६०० घर तो पण्डोंके ही हैं। चिदम्बरम्में यात्रियोंको कमसे कम एक रोज तो जरूर ही रहना चाहिये। रात्रिमें इस जगहकी एक और ही निराली शोभा हो जाती है। शंकरजीके सभा-मन्दिरकी ड्योढ़ीपर जो पीतलकी

विशाल चौखट बनी हुई उसमें जब शामसे कितने ही दिये एक साथ जगमगाते रहते हैं तब वहांकी आकर्षक शोभाको पवित्र-ताकी आंखोंसे देखकर यात्री आनन्दमग्न हो जाते हैं। बिजलीकी जगमगाहट तो कलकत्तेवालोंको रोज ही देखनेको मिलती है; परन्तु वह शोभा, जो उन तेलकी बत्तियोंसे फूट-फूटकर फैलती रहती है, इन बिजलीकी बत्तियोंमें नहीं मिलती। जिन्होंने इसे नहीं देखा वे इसका अनुमान भी न कर सकेंगे। वे ईश्वरसे प्रार्थना करें कि उन्हें दक्षिणके शिव-मन्दिरोंकी रोशनी देखनेका सौभाग्य प्राप्त हो। माणिक्य और स्फटिककी मूर्त्तियोंको रातमें शयन करा दिया जाता है, इसलिये उसके दर्शन उस समय नहीं होते।

प्रातःकाल ६ बजे गाड़ी चिदम्बरम्से श्रीरंगजीको चलती है। यहांसे कुछ पूरी प्रसाद अपने साथ ले लेना चाहिये। जिन्हें रेल-गाड़ीपर खानेमें कोई परहेज हो वे यहांसे रातके ११ बजे छूटने-वाली दूसरी गाड़ीपर आवें। सुबह १०बजेकी छूटी हुई गाड़ी १ बजे मायावरम् जंकशन पहुंचती है। यहांसे फिर पांच बजे तंजावर शहर मिलता है। यह भी जंकशन है। इस शहरमें भी देखनेयोग्य इमारतें, बाग-बगीचे बहुतसे हैं। गाड़ी यहां आधा घण्टा रुकती है। इस नगरके एक मन्दिरका शिखर इतना ऊंचा है कि तीन मीलतक गाड़ीसे चले जानेपर भी वह वहांसे देख पड़ता है। ७ बजे त्रिचिनापली जंकशन आता है। गाड़ी यहां बदल जाती है। दूसरी गाड़ी सामने ही लगी रहती है। यह गाड़ी फोर्टको

रवाना होती है। दो स्टेशनोंको छोड़कर गाड़ी फोर्ट जंकशनमें आती है। यह बहुत बड़ा जंकशन है। यहां उतरना चाहिये। बाहर बैल-गाड़ियां और कुछ घोड़े-गाड़ियां भी रहती हैं। यहांके बलोंके सींग ज्यादा लम्बे होते हैं। किराया ।≈) से ॥) तक देकर श्रीरंगजी चलनेके लिये तांगेपर बैठ जाना चाहिये।

श्रीरंग-तीर्थ

—::०::—

श्रीरंग-तीथ जाते समय राहमें कावेरी नदीका एक बहुत बड़ा एक मील लम्बा पुल मिलता है। इसे पार करनेपर करीब ही बाईं ओर एक खासा बंधा-बंधाया घाट मिलता है। इसो घाटपर यात्री गण कर्मकाण्ड कराते हैं। यहांसे श्रीरंगनाथजी एक मील पड़ते हैं। यहांसे मन्दिर कुछ दूर तो पड़ता है, परन्तु सीधे मन्दिरके पास चलकर उतरनेपर वहांसे कावेरी दूर पड़ती है। उधर मंदिरके इर्द-गिर्दमें स्वच्छ वायुका अभाव है। मूर्ख जनता मंदिरके पास ही मलमूत्र-त्याग करती है, जिससे वहांकी वायु दूषित बनी रहती है। इसलिये नदीके तट और श्रीरंगजीके बीच उतरनेकी इच्छा हो तो यहांका जल-वायु अच्छा प्रतीत होता है। यहांपर एक क्षेत्रम् (धर्मशाला) मिलता है, पर यह ३ भागोंमें बंटा है। जल, कूप, बगीचा आदिसे मनोरंजन होता है। यहां यात्री साधुओंको सदाबर्त आदि मिलता है। इसके बाहर जंगल दूरतक पड़ा हुआ

है। शौच-क्रियाके लिये तो पाठक स्वयं जान सकते हैं। यहां ठहरना हो तो प्रत्येक भाईका अधिकार है। इस क्षेत्रमूके निर्माणकर्ता चुरूनिवासी स्वर्गीय सेठ नेतरामजी केडियाके सुपुत्र बाबू रामबक्स सागरमल हैं। पक्के घाटसे नदीका स्वाभाविक सुन्दर दृश्य, लोगोंकी अपार भीड़, वहां स्वच्छन्द विहारिणी नारियोंकी निष्पाप मूर्ति,—पुरुषोंकी भांति धोती पहने हुए, गीला कपड़ा बगलमें दबाये, सचैल वस्त्रों सहित बगलमें जलपूर्ण कलस लिये हुए, नत नयनोंसे देवी मूर्तियोंकी भांति अपने अपने घरोंको जाती रहती है। उधर घाटमें कोई संध्या-वन्दन कर रहा है। तर्पणांजलि दे रहा है। कहीं स्त्रियां भी पुरुषोंकी तरह प्राणायाम-क्रियाकी साधनामें मग्न हैं, सूर्यदेवको अर्घ्य देकर अंगन्यास करती हुई 'अस्त्राय फट'का कोकिल-कलित कण्ठसे उच्चारण कर रही हैं।

कावेरी नदीके नयन-मनोहर दृश्योंकी तो वर्णना ही वृथा है। इसके लिये गोस्वामीजीकी 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' सम्पूर्ण सार्थक है। उत्ताल-तरंगमयी कावेरीके प्रमत्त प्रवाहका क्या कहना। स्नानार्थीको बहुत दूरतक तैरना न चाहिये। यहांकी नौकाएं प्रायः सब एक ही तरहकी—टोकरीके आकारकी—होती हैं, जो कभी जब भंवरमें पड़कर नर्तकी की भांति चक्कर काटने लगती हैं, तब अनजान आरोहियोंकी क्या दशा होती होगी, यह तो वही जानें, दूरसे देखनेवालोंका तो हृदय दहल जाता है। कलिकालमें अन्य नदियोंका अपेक्षा कावेरोका माहात्म्य अधिक

माना गया है। यहां पिण्डोदक क्रिया समाप्त करके धर्मशाला लौट आना चाहिये।

श्रीरंगजीके मन्दिरमें दर्शनोंके लिये दस बजेके बाद जाना अच्छा है। यहांसे मन्दिर आधा मील पड़ता है। मन्दिरको देखनेपर बड़ा आश्चर्य होता है। यह मन्दिर क्या, एक ग्रामका ग्राम जैसे इसके अन्दर बसा हुआ हो। इसमें सात परकोटे लगे हुए हैं। पहले द्वारके पर्वतोन्नत शिखर देखिये, फिर दोनों ओर मस्त भावसे झूमते हुए कुंजर-श्रेष्ठोंको विस्मय विस्फारित नेत्रोंसे देखिये। विशाल मस्तकपर ऊर्द्धपुण्ड तिलक जिसके सफेद रंगके मध्यमें लोहित श्री शोभायमान है। ये गजराज श्रीरामानुज-सम्प्रदायकी सूचना दे रहे हैं। भीतर जाकर देखनेसे एक बड़ा भारी नगर बसा हुआ देख पड़ता है। यहां बाजार, दूकानें, घर और बस्तीका पूर्ण रूप नजर आता है। सभामन्दिरके पास पहुंचकर यात्रियोंको श्रीरंगजीसे पहले गरुड़जीके दर्शन करने चाहिये। गरुड़जीको देखकर हृदय पुलक-प्रफुल्ल हो जाता है—कितनी विशाल मूर्ति है! वीरासन लगाये दास-भावमें तन्मय बैठे हुए हैं। यह मूर्ति कोई २९। ३० हाथ लम्बी होगी। फिर भी इसका सौष्ठव देखते ही बनता है। यह मूर्ति दक्षिणकी तीन अद्भुत वस्तुओंमेंसे एक है।

यहांसे चलकर श्रीरंगजीकी परिक्रमा करनी होती है। यहां दर्शनोंसे पहले परिक्रमा करनेका नियम ही प्रचलित है। परिक्रमा करते समय स्वर्णकलसोंका दर्शन कर लेना चाहिये। इनके नीचे

श्रीवसुदेवजी विराजमान हैं। इन्हें सभक्ति नमस्कार करके श्री-रंगजीके मन्दिरमें जाना चाहिये। दक्षिणके मन्दिरोंमें अन्धकार अधिक रहता है। इसलिये श्रीरंगजीके दर्शन दीपमालाकी सहायतासे होते हैं। श्रीरंगजी वृहदाकार सर्पोंकी शय्यापर लेटे हुए हैं। मूर्ति कृष्णवर्ण है। हृदयस्थलमें लक्ष्मीजीकी सुवर्णप्रतिमा विराजमान है। कन्धेसे पड़ा हुआ स्वर्णोपवीत और मूर्ति अनेक प्रकारके वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित है। पास ही एक भोग-मूर्ति है, वह भी अनेक अलंकारोंसे मण्डित है। यदि इनके दर्शनोंकी भी उत्सुकता हो तो पेटीमें एक आना डालनेपर पर्दा उठ जाता है।

दर्शन समाप्त कर बाहर आ प्रसाद-बाजार भी देख लेना चाहिये। फिर धर्मशालामें पहुंच कुछ विश्राम कर आगे चलनेका विचार करना चाहिये। अगर एक रात ठहरना हो तो रहकर पूरी प्रसादका डिब्बा बँधाकर तीन बजे दिनको जम्बुकेश्वर महादेवके दर्शनोंके लिये निकल पड़ना चाहिये। यह शिव-लिंग अपो (जल) लिंग कहलाता है। इसकी गिनती पांच तत्वोंमें है। जम्बुकेश्वर-मन्दिरकी शोभा भी बहुत ही बढ़ी-चढ़ी आश्चर्यचकित कर देनेवाली है। अपोलिंगकी दर्शनार्चना करते समय जलहरीके नीचेसे जल ऊपर उठता हुआ देख पड़ता है। यहां बहुत ही दिव्यभावसे दर्शन होते हैं।

यहांसे आगे बढ़नेपर कावेरीका पुल मिलता है। एक मील लम्बा पुल पार करते ही त्रिचिनापल्लीकी सीमा आ जाती है। यहांसे एक सुन्दर पर्वत-शिखर देख पड़ता है। श्रीगणपति-मन्दिर

इसी शिखरपर स्थित है। पहाड़ी मार्ग सुगम है। रास्ते में विचित्र ढंगके आलीशान मकान मिलते हैं। पहाड़पर श्रीगणेशजीके दर्शन अवश्य ही कर लेने चाहिये। पर्वतपरसे त्रिचिनापल्लीकी शोभा तो इतनी भली मालूम होती है कि वाह! आनन्दसे हृदय भर जाता है। अथाह शान्तिसागरमें मन निमज्जित हो जाता है। कहा जाता है,त्रिचिनापल्ली रावणके मामा मारीचकी बसाई हुई है। यह नगरी पर्वतके पदस्थलपर बड़ी दूरतक फैली हुई है। इसमें विस्तृत राजपथ, उद्यान और बड़े बड़े बेशुमार मकानात हैं। यह ग्राम भी बड़ा है। पहाड़से नीचे उतरते समय बीचमें एक स्वर्गस्थान मिलता है। इसे भी देख लेना चाहिये। तदनन्तर नीचे आ गाड़ीपर सवार हो त्रिचिनापल्ली स्टेशन आ जाना चाहिये। मार्गमें सड़कोंके दोनों ओर अच्छी अच्छी दूकानें लगी हुई हैं और बाजार तीन मीलतक लम्बा बसा हुआ है। यहांसे गुजरते समय एक बड़ा दरवाजा मिलता है। कारीगरीके लिहाजसे इसे भी देखना चाहिये—बड़ी सुन्दर और बारीक कारीगरी है। फाटकके बाहर बगीचोंकी कतारें देखते ही मन प्रफुल्लित हो जाता है। स्टेशनके पास किसी एकान्त स्थानमें उतरकर भोजन आदि समाप्त करके तैयार हो जाना चाहिये ; क्योंकि सात बजते ही गाड़ी स्टेशन-पर आ जाती है। इस गाड़ीसे मीनाक्षी-दर्शनोंके लिये मदुरा जाना पड़ता है।

बीचमें कई स्टेशन पड़ते हैं। पर इनमें यात्रियोंके योग्य कोई अच्छी चीज नहीं मिलती। स्टेशनोंमें खोमचा लगाये हुए काले

काले मनुष्य मिलते हैं और 'इटली' 'काफी' 'सुन्दर वड़म्' की आवाज लगाते फिरते हैं। कुछ तो केला और पालु (दूध) बेचते हैं। इटली एक अजीव ढंगकी बनी खाद्य सामग्री है। उर्द और चावल भिंगाकर चक्कीमें पीस लेते हैं, फिर उसकी पीठीको एक यंत्रसे पानीकी भाफमें पकाते हैं। यही 'इटली' कहलाती ह। यह बलकारक है और पाचनशक्ति भी इससे बढ़ती हैं। प्याज डाले हुए बड़ेको 'सुन्दर वड़म्' कहते हैं। कुछ शब्दोंका जानना यहांके यात्रियोंके लिये लाभदायक होगा। यहां पैसेको 'कालना' कहते हैं। गिनती एकसे दसतक इस प्रकार है :—१ को ओर, २ को रंड, ३ को मुंड, ४ को नाल, ५ को अंची, ६ को आर, ७ को एड, ८ को एट, ९ को उम्बद और १० को पत कहते हैं। इतनी गिनती याद कर लेनेसे बाकी काम इशारेसे चल जाता है। यहांके लोग इशारेके बड़े पक्के होते हैं। यहांकी गाड़ियां छोटी लाइनोंमें ही चलती रहती हैं और इनमें विशेष आराम नहीं रहता। संकीर्णता रहती है। रातके दो बजे मदुरा जंकशन आजाता है।

स्टेशनसे उतरनेपर सामने ही एक धर्मशाला पड़ती है। इसमें कुछ किराया देकर रह जाना चाहिये। यह धर्मशाला प्राचीनकाल-की किसी वेश्याकी बनायी हुई कही जाती है। अब यह गवर्नमे-एटके हाथमें आ गई है। किराया इसीलिये लगता है। मदुरा एक प्रसिद्ध शहर है। यहां धनीमानी हजारों सज्जन आते हैं, परन्तु किसीका ध्यान वहां एक धर्मशाला बनवानेकी ओर नहीं जाता, यह बड़े ही दुःखकी बात है। अगर कोई धर्मात्मा धनी सज्जन

यहां एक धर्मशाला बनवायें और आटा और घीकी दूकान उसीमें खोलवा दें तो यात्रियोंका बड़ा ही उपकार हो। आटेका तो यहां सदा ही अकाल रहता है।

अस्तु प्रातःकालके समय मीनाक्षी-दर्शनोंके लिये बाहर निकलना चाहिये। मन्दिर-द्वारपर पहुंचते ही बुद्धि चकरा जाती है—वह विशाल भव्य दिव्योन्नत मंदिर देखकर। संसारमें जैसी इसकी सुकीर्ति फैली हुई है, यह वैसा ही मन्दिर है कि होश दंग रह जाता है। मन्दिर-द्वारके शिखरको ध्यानपूर्वक देखनेसे नास्तिककी बुद्धि भी अगाध आस्तिकतामें डूबकर कुछ कालके लिये स्तम्भित हो जाती है। दक्षिणमें मीनाक्षी-मन्दिरसे आलीशान मन्दिर दूसरा नहीं नजर आता। मुख्य द्वार पूर्वाभिमुख है। इस मन्दिरमें इसी प्रकारके बारह द्वार चारों दिशाओंमें हैं। इस मंदिर-का रकबा ७५ बीघेमें है। मन्दिरके अन्दर बाजार भी लगा हुआ है। अनेक प्रकारकी चीजें तथा देवी-देवतोंके चित्र-पट बिकते रहते हैं। इसके भीतर एक तालाब भी है। जल छिड़ककर ही यात्रियोंको तृप्ति कर लेनी चाहिये। इसमें नहाना अच्छा नहीं; क्योंकि यहांके लोग हल्दी और तेल बहुत लगाते हैं,इसलिये पानीका रंग भी हल्दीकी तरह हो गया है और ऊपर तेल फैला रहता है।

मन्दिरमें प्रवेश करते ही एक सिंहकी मूर्ति मिलती है। यह शेर मीनाक्षी-देवीका वाहन है। दक्षिणावर्त करके यहांसे चलकर देवीके पास पहुंच साष्टांग प्रणाम-दण्डवत् करना चाहिये। ध्यानपूर्वक देखिये तो मालूम होगा कि मधुर मुस्कराहटके साथ

देवीजी भक्तजनोंपर अपनी कृपादृष्टि कर रही हैं। पोशाककी चमकीली छटा और आभूषणोंकी ज्योति आंखोंमें चकाचौंध लगा देती है। चरणारविन्दोंसे लेकर मस्तकतक देखनेपर मूर्ति हृदयमें अङ्कित हो जाती है, फिर कभी भी बाहर निकालनेको जी नहीं चाहता। पूजार्चनाके अन्दर श्रीमहादेवजीकी वन्दना की जाती है,ये मीनाक्षी-देवीके पति हैं। यह शिव-लिंग बड़ा तेजस्वी, चांदीके त्रिपुण्डतिलकसे शोभायमान सफेद दुपट्टा ओढ़े दिखाई पड़ता है। ऊपर नजर डालनेपर मन्दिरमें हाथी, घोड़े आदिकी चित्रकारी देख पड़ती है।

यहां एक बड़ी भयानक लीला देखनेमें आती है। वह यह कि आश्विन शुक्ल नवरात्रिके दिनोंमें कितनी ही स्त्रियां, बाल खोले, सिर हिलाती, झूमती हुई,देख पड़ती हैं। कोई कोई स्त्री दो दिन, चार दिन, आठ दिनतक लगातार ऐसा ही करती रहती है। पण्डोंसे पूछनेपर मालूम हुआ कि इन्हें प्रेतबाधा कई सालसे थी। जब प्रेत-बाधा नहीं छूटती तब इनके घरवाले नव-रात्रमें इन्हें यहां छोड़ जाते है। यहां आते ही स्त्रियां इसी प्रकार झूमने लगती हैं और झूमते घूमते प्रेत-बाधा चली जाती है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि पुत्र न होनेके कारण स्त्रियां इस तरह झूमती रहती हैं। जब देवीजीकी ओरसे इन्हें स्वप्न प्राप्त होता है या कुछ इसी तरहका इशारा मिलता है, तब ये यहांसे चली जाती हैं। यह हाल मैंने अपनी आंखों देखा है। यहां युवती स्त्रियां ही अधिक रहती हैं। परमात्मा जाने,यह क्या रहस्य है।

दर्शन समाप्त कर अपने डेरेमें कुछ देरतक विश्राम कर लेनेके पश्चात् परान्ह ४ बजे यहांके राजमहलोंका देखना जरूरी है। यह राजप्रासाद ३०० वर्ष पहलेका बना हुआ है । इस महलको पहलेपहल क्षत्रिय राजाओंने बनवाया था । फिर यह मुसलमान बादशाहोंके हाथमें गया। अब यह अंग्रेजोंके अधिकारमें है। महलके अन्दर जहां दरबार लगता था, वह स्थान बड़ा ही विचित्र है। इसमें जो खंभे लगे हैं वे बहुत ऊंचे और मोटे होने-पर भी बहुत सुन्दर हैं। आजतक कहीं इनकी मरम्मत नहीं की गई। इनमें लोहे या पत्थरके जोड़ कहीं नहीं नजर आते। ये केवल चूने जौर ईंटोंसे ही बनाये गये हैं। आजकलके यूरोपीय ढंगसे, लोहे और पत्थरोंका जोड़ लगाकर बनानेवाले, मदान्ध शिल्पकार भी इन्हें देखने और शिक्षा प्राप्त करनेके लिये आते हैं।

यहांसे यात्री लोग एक बगीचा देखने जाते हैं। यह पानीमें बना हुआ है। मदुरा कारीगरीकी दृष्टिसे प्रशंसनीय स्थान है। खासकर जरीकी साड़ी यहांकी बहुत प्रसिद्ध है। यहां रंग आदि-के भी कारखाने हैं।

दिनके ग्यारह बजे गाड़ी यहांसे श्रीरामेश्वर-धामको छूटती है। इसीपर यात्रियोंको सवार हो जाना चाहिये। गाड़ी छूट जाने-पर दाहिनी ओर एक पर्वत मिलता है, बड़े ही सुन्दर सुन्दर दृश्य उसमें देख पड़ते हैं। तीन बजनेके बाद कुण्डू नामका स्टेशन मिलता है। यहां कुछ देरतक गाड़ी ठहरती है। पिछले जमानेमें रामेश्वरके यात्री इसी स्टेशनपर उतार दिये जाते थे। यहांसे

उन्हें लांच-बोटसे होकर जाना पड़ता था। लांच-बोटको चारों ओरसे पनडुब्बे घेरे रहते थे। लोग रुपया, अठन्नी, पसा, जो कुछ समुद्रमें छोड़ते थे, उसे वे बड़ी विचित्र रीतिसे मुखमें दबाकर बाहर निकलते थे। जब लांचबोट कुछ दूर निकल जाता था तब एक तरफ भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका बनाया हुआ सेतु लोगोंको देख पड़ता था। सेतुकी रेखा और कुछ खण्ड ही लोगोंको नजर आते थे। अब रेलवे कम्पनीने सेतुके खण्डोंको एक साथ जोड़-कर उसपरसे गाड़ी चला दी है। ४ बजे परान्ह कालमें गाड़ी रामेश्वर स्टेशन पहुंच जाती है। मन्दिरका ऊंचा द्वार वहांसे देख पड़ता है, जिसे बड़े भक्तिभावसे यात्री लोग प्रणाम करते हैं और साथ ही बाबा रामनाथकी तुमुल जय-ध्वनिसे आस-मानको गुंजा देते हैं। स्टेशनपर पहुंचकर यात्रियोंको चाहिये कि वे कुछ दूर पैदल ही चलकर अपने ठहरनेके स्थानपर पहुंचें। राम झरोखेकी सड़क आ जानेपर स्वर्गीय सेठ रायबहादुर भगवानदास बागलाकी एक धर्मशाला मिलती है। इसमें ठहरना बहुत ही आरामदायक है। यहां कई धर्मशालाएं और भी हैं।

रामेश्वर-धाम

पहले दिनका कार्यक्रम

सुबहको पंडेजी महाराजके साथ लक्ष्मण तीर्थ जाना चाहिये। यहाँ मुण्डन स्नान पिण्डोदक क्रिया आदि अवश्य ही

करना चाहिये। जिनके माता-पिता स्वर्गवासी हो चुके हैं उनके लिये इस अनुशासनका पालन करना परमावश्यक है। और कर्म तो सबको करना ही पड़ता है। इस देश तथा अपर देशोंकी देवियां भी यहां मुण्डन कराती हैं। यहांसे चलकर मन्दिर जाना चाहिये। मार्ग बड़ा ही रमणीय है। दोनों ओर नारियलके पेड़ और भव्य भवन सुसज्जित और रमणीय रूपसे दृष्टिको तृप्त करते हैं। कुछ देर बाद श्रीरामेश्वरजीका मन्दिर पड़ता है। मन्दिरके सामने आते ही परम श्रद्धा-भावसे साष्टांग प्रणाम कर मन्दिरके द्वारोंका अवलोकन करना चाहिये। द्वारके वाम पार्श्वमें छोटे छोटे बंगले हैं। उनमें देवतोंकी मूर्तियां हैं। जिस द्वारसे होकर यात्रियोंको मन्दिरके अन्दर जाना पड़ता है, वह पश्चिम द्वार है। इसके सामने नगर बसा हुआ है। पूर्व द्वारमें श्रीरामेश्वरजीका सभा-मन्दिर है। यह समुद्रके नजदीक है। दक्षिण और उत्तर द्वार भी हैं। पश्चिम द्वारसे प्रवेश कर एक बड़ा ही महत्वपूर्ण दृश्य नजर आता है। बड़े बड़े राजों-महाराजोंकी मूर्तियां, खम्भोंमें खड़ी की हुई, मन्दिरको मानो धारण किये हुए हैं। इनसे आस्तिकताकी जो शिक्षा मिलती है, उससे हृदयको अपार हर्ष होनेके साथ ही एक बहुत बड़ी शिक्षा भी मिलती है। इनके नीचे भांति भांतिके चित्र बिकते रहते हैं। एक चित्र ऐसा है जिसमें श्रीरामेश्वरजीकी पूजा श्रीरामचन्द्रजी और श्री जानकीजी बड़े भक्ति-भावसे करते हुए दिखाये गये हैं। आगे एक लम्बी राह मिलती है। इसे परिक्रमा कहते हैं। यहां प्राचीनकालमें एक गण-

पति देवकी मूर्ति थी। कुछ दिन हुए इस मूर्तिको यहांसे हटानेका उद्योग किया गया। परन्तु मूर्ति किसी तरह यहांसे टली नहीं। अन्तमें बारूदका सुरंग लगाकर कुछ नीचेसे तोड़ दी गई। इस कार्यको लेकर बड़ी हलचल मची थी। अब पुरानी परिक्रमा तोड़कर नईके बनानेका उद्योग हो रहा है। इसे भी पूर्णरीतिसे तयार हो जानेमें अभी ३०-३५ साल लग जायंगे। नई परिक्रमाकी बनावट बड़ी विचित्र होगी। अभी जो परिक्रमा है, इसका प्रारम्भ यात्री लोग अपने बांये भागसे करते हैं। इधर एक रास्ता चौड़ी सड़ककी तरहका देख पड़ता है। जहां बाईं परिक्रमा समाप्त होती है उसके एक कोनेमें श्रीराम-जानकीकी एक मूर्ति मिलती है। इसमें दोनों बड़ी भक्ति और श्रद्धाके साथ श्रीमहादेवजीकी पूजा कर रहे हैं। इस मूर्तिका भाव बड़ा मर्मस्पर्शी है। इसमें श्रीरामचन्द्रजी यह प्रार्थना करते हैं कि हे भव! तुम्हारी कृपासे ही मैं इस समुद्रके पार जानेमें समर्थ हुआ हूं। इस मूर्तिको भक्ति-समेत बारम्बार साष्टांग प्रणाम करके मार्ग समाप्त करना चाहिये। इस मार्गका अन्त होते ही श्रीशिवजी ताण्डवनृत्य करते हुए देख पड़ते हैं। इससे थोड़ी ही दूरपर पूरबका दुवार मिलता है। यहां भीमकाय श्रीहनुमानजीकी मूर्ति खड़ी है। सामने समुद्रदेवकी लहरें क्रीड़ा-कल्लोल कर रही हैं। सभामन्दिरको यहींसे जाना पड़ता है। पहले एक कीर्तिस्तम्भ मिलता है। इसकी दाहिनी ओरसे, नमस्कार करके, बाईं ओरको जाना चाहिये। यहां नवग्रह विराजमान हैं। इन्हें भी नमस्कार करके दाहिनी ओरसे होते

हुए नन्दिकेश्वरके पास जाना चाहिये। नन्दिकेश्वरको देखकर हृदयको बड़ा आश्चर्य और साथ ही अपार आनन्द होता है। इनकी देह विशाल है। वीर-आसन जमाये स्वच्छन्दतापूर्वक अपनी नासिका लेहन कर रहे हैं। इनके सामने ही श्रीशिवजी विराजमान हैं। इनकी यहां जितनी उन्नत और स्थूलकाय मूर्ति है, ऐसी मूर्ति और कहीं नहीं देखनेमें आती। इन्हें नमस्कार कर यात्री लोग पासहीके एक राक्षसके पास जाते हैं। इसे हरबोला कहते हैं। यात्री इसके पास पहुंच तानकर एक तमाचा इसको लगते हैं। इसके विषयमें यह कहा जाता है कि पहले हरबोला बड़ा प्रमादी था, पीछेसे शिवभक्त बन गया। लेकिन जब शिवजी इसपर प्रसन्न हुए और इसे वर देना चाहा, तब इसने एक अजीब वर मांगा। इसने कहा, महाराज! अपने जीवनमें मैंने बड़े बड़े पाप-कार्य किये हैं,अतएव आप मुझे यह वर दें कि आपके यहां जितने यात्री आवें,सब पहले मेरे सिरपर एक थप्पड़ लगावें तब आपके दर्शन करने जाय। थप्पड़पर थप्पड़ खाते खाते इस बेचारेका सिर भी पतला पड़ गया है। इसके आगे द्वारकी चौखटमें एक काला पत्थर है। यह बहुत चिकना है। इसकी इतनी चिकनाई है कि मुख साफ देख पड़ता है। यहांसे चार पैड़ियां और पड़ती हैं। इसपर चढ़कर श्रीरामेश्वरजीकी चौथी ड्योढ़ीपर खड़े होते हैं। चौथी ड्योढ़ीके भीतर एक बड़ी जलहरीके अन्दर अन्दाजन सवा हाथ लम्बा श्रीरामेश्वरजीका ज्योतिर्लिंग है। चांदीके त्रिपुण्ड्रके साथ, चन्दन-गन्ध-चर्चित, स्वच्छ सफेद दुपट्टे ओढ़े हुए है। इस

तेजोमय ज्योतिर्लिंगके दर्शन कर हृदयको कितना आनन्द प्राप्त होता है, यह वही जानते हैं जिन्हें इसका अनुभव हो चुका है। जब कपूरकी आरती की जाती है तब बहुत अच्छी तरह दर्शन होते हैं। इनके दर्शनसे हृदयकी जन्म-जन्मोंकी अर्जित पापराशि भस्म हो जाती है। दर्शक भक्त अपने इस जीवनको सफल मानते हुए प्रेम-गद्गद हो जाते हैं। इस समय प्रभु श्रीरामनाथकी मूर्तिका अनुपम भाव हृदयमें चिरकालके लिये संचित कर उधर पीठ न फेरकर कुछ दूरतक उल्टा हटना चाहिये। यहांसे फिर एक दालान मिलता है। यह श्रीरामेश्वरजीके मन्दिरकी बराबरीमें है। यहां श्रीकाशीविश्वनाथके दर्शन होते हैं। ये वही काशीविश्वनाथ हैं, जिन्हें लंकापर आक्रमणके बाद श्रीरामचन्द्रजीने हनूमानजीको भेजकर काशीसे मंगाया था शिवलिंगकी स्थापना करनेके विचारसे। परन्तु लानेमें देर हो जानेपर अपने हाथों बालूका ही शिवलिंग बनाकर वहां स्थापित कर दिया था। इसके बाद श्रीहनूमानजी जब काशीविश्वनाथको ले आये तब श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे हनूमान, समय टल जानेके भयसे हमने शिवस्थापना कर दी है; परन्तु हनूमानको कुछ क्रोधसा आ गया। उन्होंने कहा—नहीं, आप मेरी लाई मूर्तिको ही यहां स्थापित करें। इसपर श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराये और कहा, अच्छा है, अगर तुम इस मूर्तिको यहांसे उखाड़कर फक दे सको तो इस तुम्हारी लाई मूतिको ही यहां स्थित करेंगे। हनूमानजी आवेशमें थे ही, लगे अपनी पूंछसे लपेटकर उस शिवलिंगको उखाड़ने। पर वह लिंग
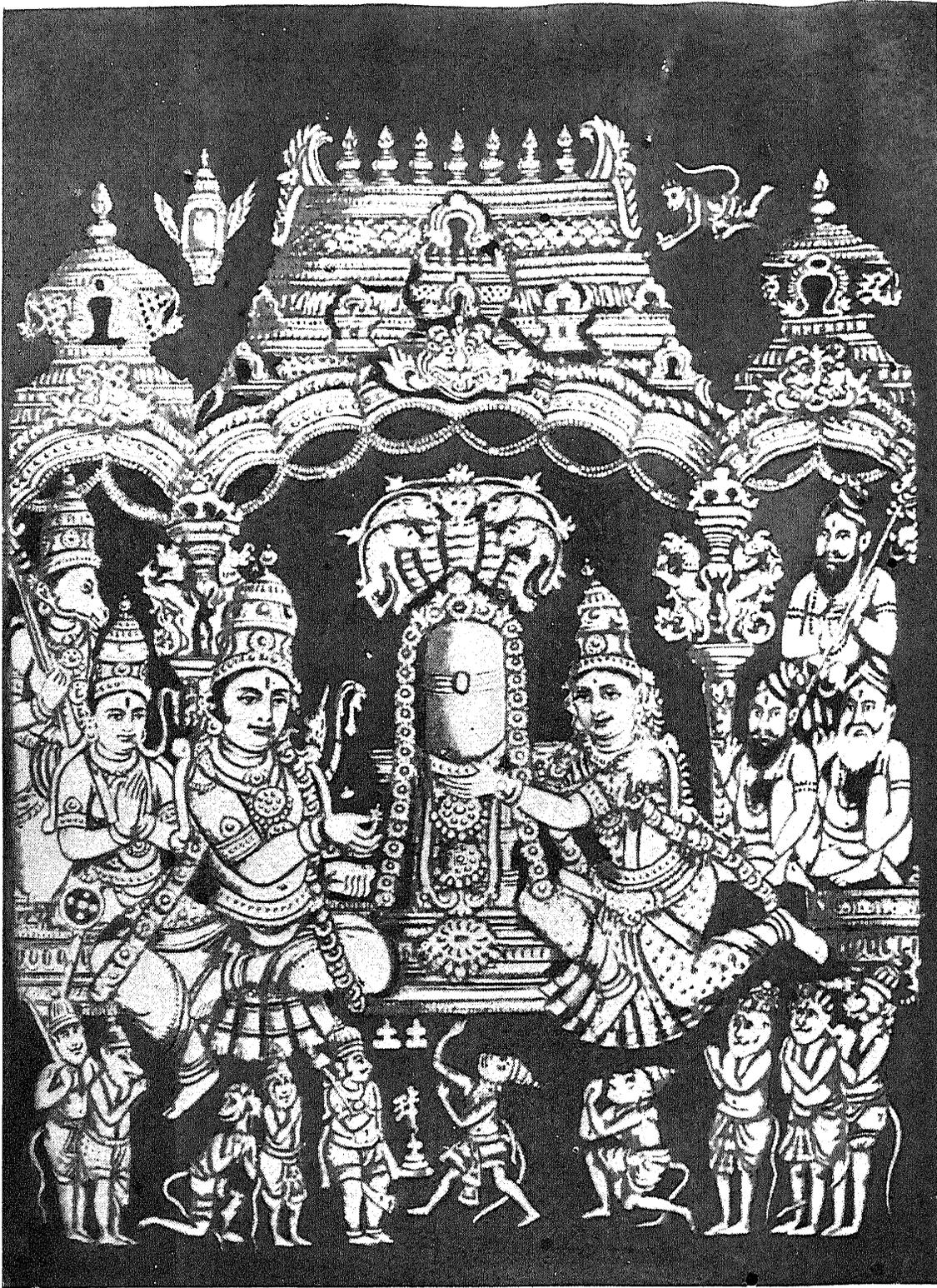
श्रीराम जानकी लंका विजय प्राप्त कर श्रीराम नाथकी पुजा कर रहे है।

THE INDIAN ART SCHOOL.
" BOWBAZAR STREET, CALCUTTA.

इनका उखाड़ा न उखड़ा। अन्तमें ये मूर्च्छित हो गये। जब जागे तब होश हुआ और समझ आई। श्रीरामचन्द्रजीके पैरों पड़े। माफी मांगी। और अपनी लाई मूर्तिको भी वहीं कहीं स्थापित करनेकी प्रार्थना की। तब श्रीरामचन्द्रजीने उसी मूर्तिके बराबर इसे भी स्थापित कर दिया। यह कथा रामेश्वर-माहात्म्यमें विस्तारपूर्वक लिखी है। इसके बाद श्रीशिवजीके दाहिने भागमें श्रीपार्वतीजीका मन्दिर है। यहां भी दर्शन अवश्य करना चाहिये। पार्वतीजीका पहनावा यहां जितना भव्य और मनोहर है उतना और कहीं नहीं। चिदानन्दमयी अपनी अर्धांगिनीके दर्शन करते देख भक्तोंपर शिवजी बहुत प्रसन्न होते हैं। शुक्रवारको श्रीपार्वतीजीकी सवारी बड़े ठाटबाटसे निकलती है। इस सवारीको बिना देखे यात्रीगण धामको कभी न छोड़ें। शुक्रवारकी शामसे ही लोगोंकी चहलपहल मच जाती है। यात्री लोग मन्दिरकी तीसरी परिक्रमामें जा डटते हैं। ८ या ९ बजे रातको सवारी निकलती है। आगे आगे नन्दिकेश्वर रहते हैं। इनपर नक्कारे बंधे, निशान सहित बजते रहते हैं। पीछे नागेश्वर और मंदोळ बाजा बजता रहता है। इसके घोर स्वरसे मन्दिर गूंज उठता है। हाथी, घोड़े, ऊंट, अनेक कामदार कीमती वस्त्रोंसे सुसज्जित हो सवारीके साथ रहनेके कारण शोभा और बढ़ जाती है। वेद-ध्वनिद्वारा दिगन्त मुखरित करते हुए सवारीके साथ ब्राह्मणगण भी चलते हैं। बीचमें दो नर्तकी वेश्याएं चलती हैं। परन्तु ये न तो गाती हैं और न नाचती हैं। जरीकी साड़ी हीरोंके आभू-

षण पहने कभी कभी जरा हावभाव दिखला देती हैं—बस । मजा यह कि माता पार्वतीकी तरफ फिर जनताका ध्यान नहीं रहता, फिर तो वह बस इन्हीं वेश्याओंको मन्त्रमुग्धकी तरह एकटक देखती रहती है । समयको नमस्कार है कि आजसे १० । १२ वर्ष पहले यहां वेश्याओंका नामोनिशान न था । परन्तु अब इन्हींका रंग जमता जाता है । मन्दिरके संचालकों और मैनेजरको इस ओर ध्यान देना चाहिये । तीर्थमें लोग इस उद्देशसे जाते हैं कि अन्तःकरण शुद्ध हो और आत्मबलकी वृद्धि । परन्तु इस तरह रंडी-भंडुओंकी नजारेबाजीसे कब साधारण जनता बिना क्षुब्ध और पतित हुए रह सकती है । परिणाम पुण्यके बदले पाप होता है । यहां यात्रियोंको एकाग्रताकी शरणमें अपना बचाव करना चाहिये । वे उस समय भी पार्वती-माताके कमल-चरणोंका ही ध्यान करते रहें । सुशोभित, भक्तजनोंके कन्धेपर विराजमान मूर्तिके प्रति भक्तिभावसे भक्तको चाहिये कि वे अवश्य ही यहां कन्धा लगाकर जीवन धन्य कर ल । सवारी १२ बजे राततक घूमती हुई शिवमन्दिर पहुंच जाती है ।

दूसरे दिनका कार्यक्रम

सदाकी तरह पहले दैनिक क्रियाओंसे निवृत्त होना चाहिये । इस तरह शरीर और मनको शुद्ध करके मन्दिर जाना चाहिये । यहां २४ तीर्थ हैं । पण्डाजो यात्रियोंके साथ रहकर इन तीर्थोंमें स्नान कराते हैं । सबल यात्री तो चाहे इन २४ तीर्थोंमें एक ही

दिन चौबीस बार स्नान कर ले, परन्तु दुर्बल यात्रियोंका काम नहीं कि वे चौबीस बार गोते लगायें। इसलिये उन्हें मार्जनसे सन्तोष करना चाहिये। उधर शास्त्रोंमें भी मार्जन-क्रियाको स्नानके तुल्य ही माना है। दर्शन आदिसे निवृत्त हो अपनी जगह आ जाना चाहिये। यहांसे मीलभरकी दूरीपर जटा तीर्थ है। भगवान श्रीरामचन्द्रजीने यहीं अपनी जटा धोयी थी। यह स्थान मरु-भूमिसा है। यहां टीले भी बड़े बड़े हैं। एक ओर समुद्र और दूसरी ओर बालूके बड़े बड़े ऊंचे टीले। यात्री लोग इनपर बैठकर विश्राम करते हैं। यहांका दृश्य भी मनोहर है।

तीसरे दिनका कार्यक्रम

यहांका एक प्रधान तीर्थ है धनुष-कोटि। तीसरे दिन रेलगाड़ीपर सवार हो यहांकी यात्रा की जाती है। पहले जब रेलगाड़ी नहीं चली थी, यात्रियोंको नौका अथवा बैलगाड़ियोंसे होकर जाना पड़ता था। रास्तेमें एक रात एक तेलीके क्षेत्रमें ठहरना पड़ता था। और क्षेत्रके नियमानुसार रातको वहांके यात्रियोंको उसी तेलीका अन्न खाना पड़ता था। अब गाड़ीके निकल जानेपर वे दिक्कतें टल गई हैं। धनुषकोटि पहुंचनेपर यहांकी आश्चर्यमें डालनेवाली प्राकृतिक लीलाएं देखकर मुग्ध हो जाना पड़ता है। यहां वंग-सागर और अरब-सागर दोनों एक दूसरेसे मिलते हैं। इन्हें महोदधि और रत्नाकर भी कहते हैं। समुद्रका यह प्रेमालाप छः महीनेतक हुआ करता है। उत्ताल

तरंग-मालाएं अपनी प्रेमोन्नत बाहुओंको बढ़ा बढ़ाकर आनन्दसे मिलती हुई देख पड़ती हैं। छः महीनेतक रत्नाकरसे लहरें उठ-कर महोदधिको गले लगाती हैं और छः महीने इस प्रेमका बदला इसी तरह महोदधि भी रत्नाकरके लिये चुकाता है। इस जगह पूजा कर बालूकी वेदी बना स्वर्णनिर्मित धनुष-पूजा करते हैं। धनुष या तो यात्री अपने पाससे लेकर रखते हैं या पण्डाजीको कुछ देकर स्थित-निर्मित धनुषकी पूजा करते हैं। पूजन आदि समाप्त हो जानेपर यात्रियोंको अपने डेरेपर वापस आ जाना चाहिये।

चौथे दिनका कार्यक्रम

यहांपर वेद-पाठशाला है। चौथे दिन यात्रियोंको इसे जरूर देख लेना चाहिये। यह भी किसी तीर्थसे कम नहीं है। क्योंकि यहां वेद-भगवानका अध्ययन कराया जाता है। जिससे हृदयका सम्पूर्ण मोह नष्ट हो जाता है। यहां विद्यार्थियोंको पुस्तकों या कागज-कलमके सहारे शिक्षा नहीं मिलती। कुल अभ्यास जबानी कराया जाता है। विद्यार्थीगण एक दूसरेकी ओर सामना करके बैठते और अपने मधुर कण्ठसे वेदोंके अमर मन्त्रोंका उच्चारण किया करते हैं। यहां १५ वर्षों तक रहकर विद्यार्थीको वेदोंकी पूर्णांग शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती है। धनीमानी सज्जनोंकी सहा-यतासे हरएक विद्यार्थी ५) पांच रुपयेसे लेकर ७) सात रुपयेतक की वृत्ति पाता है। यात्रियोंको यहांपर कुछ अवश्य दान करना

चाहिये। दक्षिणमें इस तरहकी कई पाठशालाएं मिलती हैं। मनु-महाराजका कथन है कि मनुष्ययोनिमें पुनर्वार आनेकी आकांक्षा रखनेवालेको विद्यादान करना चाहिये। जो ज्ञान-दान करता है, वह ईश्वरकी कृपासे वही चीज पाता भी है। इस तरह ज्ञान-दान करनेवाले मनुष्य-योनिमें ही आकर जन्म लेते हैं। ज्ञान-दानकी सहायता करना भी वही फल देनेवाला है। इसीलिये विद्या या ज्ञानकी वृद्धिमें सहायता करना सबसे श्रेष्ठ कर्म और उच्चतम श्रेणीका दान है।

तदनन्तर ४ बजे, दिनके पिछले पहर, राम-झरोखे जाना चाहिये। इसके सम्बन्धमें यह कहावत मशहूर है—

"राम झरोखे बैठकर सबका मुजरा लेय।
जाकी जैसी चाकरी ताको तैसा देय॥"

अस्तु, यहांका मार्ग कण्टकाकीर्ण है। राहमें बबूलके कांटे बहुत पड़ते हैं। अतएव रास्ता सावधानीसे तय करना चाहिये। यहांसे कुछ दूरपर सुग्रीव-कुण्ड मिलता है। यहांपर मार्जन कर आगे चलना चाहिये। रामझरोखेके पासही एक ऊंचा टीला-सा है। इस टीलेमें प्राचीनकालका एक बड़ा ही सहृदय भाव छिपा हुआ है। यहींपर बैठकर भगवान श्रीरामचन्द्रजीने अपनी विशाल वानरवाहिनीका प्रणाम स्वीकार कर उन्हें आशीर्वाद प्रदान किया था। थोड़ी देरके लिये यहां बैठकर उस प्राचीन महिमाका स्मरण करना चाहिये। जिन्हें अनुभव हो चुका है, वही जानते हैं कि यहां थोड़ी ही देरमें अन्तस्तलको पुलक-प्लावित

करनेवाली कैसी शान्ति मिलती है। फिर यहां दिनके रहते ही अपने डेरेपर वापस आ जाना चाहिये। इस तरह चौथे दिन श्रीरामेश्वरकी यात्रा समाप्त होती है। अधिक दिनोंतक ठहरना यात्रियोंकी इच्छापर निर्भर है।

जिन लोगोंने वाल्मीकि-रामायण देखी है वे जानते होंगे कि इस स्थानकी कितनी महिमा भगवान श्रीरामचन्द्रजीने अपने श्रीमुखसे कही है। जब वे रावणको जीतकर पुष्पक-विमानपर बैठे हुए लौट रहे थे तब इस स्थानको देखकर इसकी बड़ी प्रशंसा की है कि इस स्थानमें मैंने श्रीशंकरजीकी पूजा की थी जिनके विजय-वरसे ही आज मैं विजयी होकर लौट रहा हूं। जिसकी कीर्ति भगवान श्रीरामचन्द्रजी अपने मुखसे कहें, वह स्थान वास्तवमें अमर है।

योंतो यह भूमि बहुत प्राचीन और महत्वमयी है, इसमें कोई सन्देह नहीं; परन्तु कुछ लोग जो यह बतलाते हैं कि यह मन्दिर भी अनादि है, सो यह बात माननेयोग्य नहीं। यह मन्दिर ५०० पांच सौ वर्षका पुराना है। इसे रामपुरके शैव महाराजने बनवाया था।

अस्तु रामेश्वरसे चलते समय वियोग-दुःखके दुखी यात्रियोंको दिनके १० बजेसे पहले ही स्टेशन आ जाना चाहिये। गाड़ी यहींसे छूटती है। यहांसे शिव-कांची विष्णुकांचीके लिये प्रस्थान करना चाहिये। स्टेशन कांचीवरम् कहलाता है। खैर,जब गाड़ी चल देती है तब सेतुका दृश्य और कम्पनीकी कारीगरी अवश्य
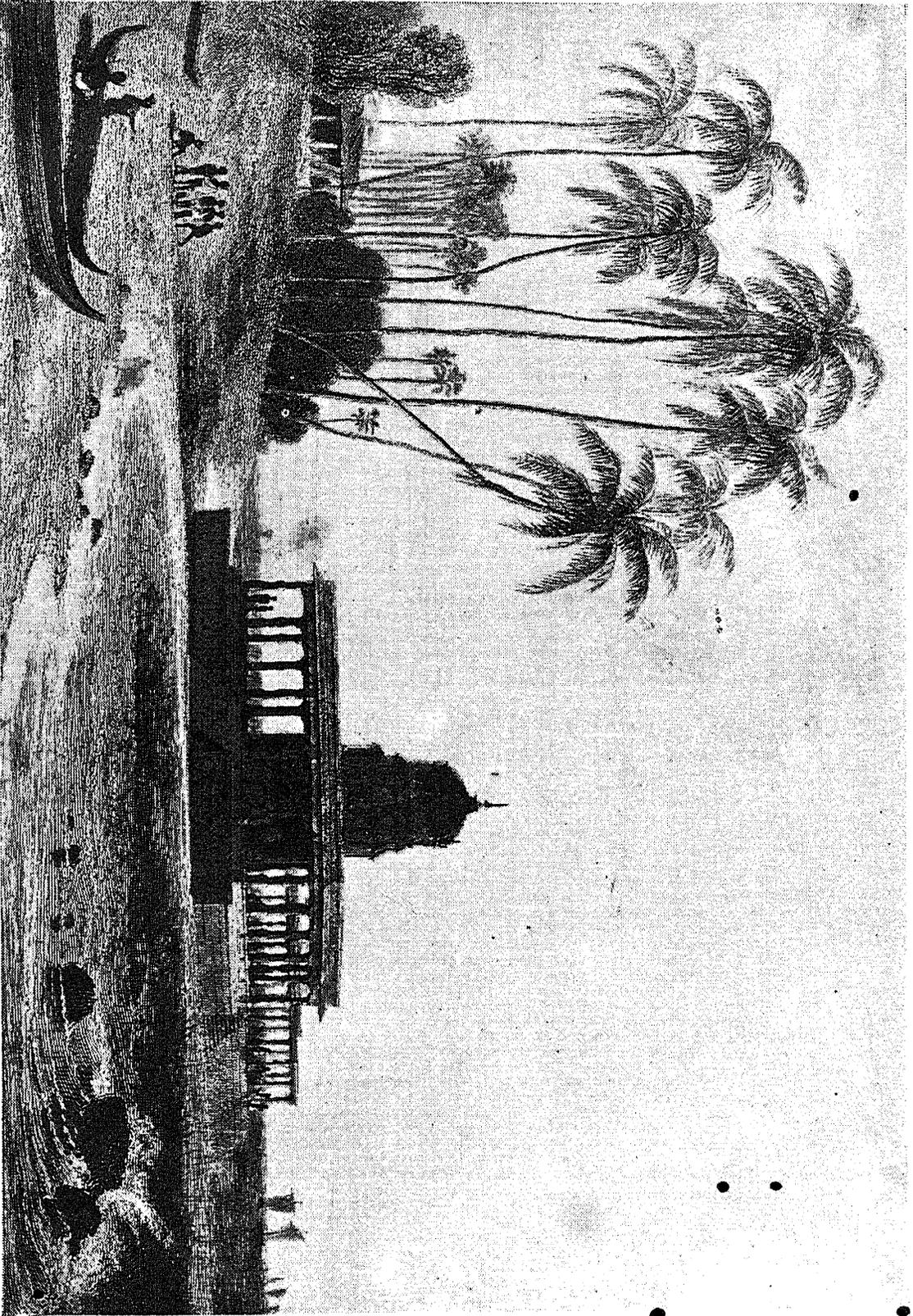
श्रीरामेश्वर (राम झरोखा)

देखना चाहिये। इससे मनोरंजन भी होता जायगा और आधुनिक वीर कर्म्मियोंकी कृतिसे हृदयको आनन्द भी होता रहेगा। गाड़ी दो बजे मदूरा स्टेशनपर आती है। मन-ही-मन मीनाक्षी-देवीको प्रणाम कर लेना चाहिये। फिर रातके १० बजे कुंभकोनम् स्टेशन मिलता है और सुबह होते ही चिंगलपीठ नामका जंकशन आ जाता है। यहां उतरकर गाड़ी बदलनी पड़ती है। यहींसे एक दूसरी गाड़ी कांचीवरम्को जाती है।

———

शिवकांची-तीर्थ

शिवकांची पहुंच जानेपर मन्दिरके पास ही ठहरनेकी जगहें हैं। वहीं उतरना चाहिये। यहां एक बहुत बड़ा सरोवर सर्वतीर्थ नामका है। पहले यहां स्नान और तर्पण-पिण्डदानादिसे निवृत्त हो जाना चाहिये। फिर दर्शनोंके लिये मन्दिर जाना उचित होगा। मन्दिरका द्वार क्या है, गगनचुम्बी शिखर है। लोग कहते हैं यह महाराज जन्मेजयका बनवाया हुआ है। यहांसे भीतर प्रवेश करनेपर नन्दिकेश्वर मिलते हैं। इन्हें प्रणाम कर, इनको दाहिनी ओरको लेकर जाना चाहिये। तो एक शिवलिंग मिलेगा, जिसका नाम अमरनाथ महादेव है। पंचतत्त्वोंमें एक लिंग यह भी पृथ्वी-तत्त्व है। श्रीपार्वतीजीने बालूका लिंग बनाकर स्वयं ही

इसकी स्थापना की थी। इस मूर्तिपर जल नहीं चढ़ता, चमेलीके तेलसे स्नान कराया जाता है। पूजन और दर्शन समाप्त कर इसकी दो परिक्रमाएं भी पूरी कर डालनी चाहिये। पहली परिक्रमामें शिव-सभा मिलेगी, इसमें केवल शिवजीकी ही मूर्तियां हैं। दूसरी परिक्रमा बहुत बड़ी है। इसमें एक पेड़ आमका मिलता है, यह बहुत पुराना है। कहते हैं, पार्वतीजीने यहीं आसन जमाकर तपस्या की थी। अब इसके चारों ओर शिव-सभाएं तथा अन्य मूर्त्तियां भी परिक्रमाके भीतर विराजमान हैं। इस परिक्रमामें एक सहस्र लिंग शिवके दर्शन होते हैं। इन्हें सहस्रेश्वर महादेव कहते हैं। यहां साक्षी-गोपालके भी दर्शन होते हैं। वहां कितने ही लोगोंसे सुननेमें आया कि शिव-कांची और विष्णु-कांचीमें बड़ा बैर-भाव रहता है। परन्तु यह बात बिलकुल निराधार है; क्योंकि शिव-कांचीमें ही एक जगह विष्णुकी मूर्ति भी स्थापित ह। अगर बैरभाव ही होता तो इस विष्णुमूर्तिका स्थापना यहांपर फिर कैसे हो सकती थी?

दिनको अपने डेरेमें विश्राम करके रातको फिर अमरनाथके दर्शन करने चाहिये। रातको यहांकी शोभा अपूर्व सौन्दर्य धारण करती है। शिवजीके द्वारकी दीपावली तो अत्यन्त ही नयन-रंजिनी प्रतीत होती है। दूसरे दिन नगरके बीचसे होकर सवारीपर चढ़ विष्णुकांची चलना चाहिये। रास्तेमें एक बहुत बड़ा रथ मिलता है। यह तीन सौ वर्ष पहलेका बना हुआ था। जिसमें अभी पांच वर्ष हुए आग लग गई। उसके

जल जानेपर यह दूसरा रथ शिवभक्तोंने बनाया। मार्गके मनोहर दृश्य देखते हुए आसानीसे रास्ता पार हो जाता है। विष्णुकांची भी आ जाती है। मन्दिरमें पहुंचकर बांई ओरसे प्रवेश करना चाहिये। यहां भी एक तीर्थ-सरोवर है और किनारे एक सुन्दर इमारत खड़ी हुई है। इसमें १०८ खंभे हैं, और उनकी नक्काशी देखिये तो आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहता। इमारतके चारों ओर एक जंजीर है। यह लोहेकी जंजीर नहीं, पत्थरसे ही निकाली गई है, देखते ही लोग ताज्जुबमें पड़ जाते हैं। मन्दिरमें पहुंचनेपर ऐसा जान पड़ता है कि यह मन्दिर पहाड़की चोटीपर बना हुआ है। सीधे-टेढ़े कितने ही रास्ते हैं। इन्हें पार कर प्रभुके पदारविन्दोंमें पहुंचना होता है। यहां पूजार्चा करके भक्त यात्रियोंकी अन्तरात्मा आनन्दसे खिल उठती है। उन्हें अपना अपार श्रम सार्थक जान पड़ता है। वे धन्य हो जाते हैं।

यहांसे नगर-निरीक्षण करते हुए अपने स्थानपर वापस आ जाना चाहिये। कांचीवरम् एक विस्तृत और प्रतिष्ठित नगर है। यहां चार-पांच लाखकी मनुष्य-संख्या कही जाती है। यहां रेशमके कारखाने ही पांच हजारके करीब होंगे। दूसरे व्यापार भी यहां होते हैं और यह नगर २५ मीलमें बसा हुआ है।

यहांसे यात्रियोंको लक्ष्मणबालाके दर्शनोंके लिये चलना चाहिये। १० बजे दिनको गाड़ी छूटती है और आरकोनम् जंकशन होते हुए लक्ष्मणबाला पहुंचती है। ३ बजेके करीब रेनी-

गुण्टा जंकशन आता है। यहां उतर जाना चाहिये। घोड़े-गाड़ीपर सवार हो तृप्तिकी धर्मशालामें दिनभर विश्राम करके शामके ४ बजे कपिल-गंगाके दर्शन करने चाहिये। ये पर्वत-पदस्थलको धोकर प्रवाहित हो रही हैं। दृश्य तो हर तरहसे मुग्ध कर देनेवाला है। पहाड़ी प्रपात बड़े जोरोंसे गंगा-गर्भमें आकर गिरता है। वह शुभ स्वच्छ धारा! अहा! देखते ही बनती है। कपिलगंगाका सरोवर पक्की ईंटोंसे बंधा हुआ है। चारों ओरसे मन्दिरोंकी कतारें हैं। यहां एक मन्दिर अवश्वत्थामाका भी देख पड़ता है जो यहांके सिवा और कहीं नहीं है। रातभर यहां विश्राम करके सुबह लक्ष्मणबालाके पहाड़की ओर चलना चाहिये।

श्रीलक्ष्मणबाला

—:०:—

यह पर्वत बड़ा ही शानदार है। इसके जोड़का सुन्दर पर्वत मुश्किलसे कहीं देखनेमें आता है। इसके नीचे बहुत-सी डोलियां मिलती हैं। किराया ५) आनेजानेके लिये पड़ता है। कितने ही यात्री तो पैदल चलकर ही पहाड़की यात्रा करते हैं। जाते समय रास्तेमें रामदास भक्तकी एक पत्थरकी औंधी मूर्त्ति मिलती है, इसे प्रणाम कर आगे बढ़ना चाहिये। मार्ग "गोविन्दा, गोविन्दा, गोविन्दा"की ध्वनिसे गूंजता रहता है, यह ध्वनि यात्रि-

योंके कण्ठसे निकलकर पहाड़ी चट्टानोंमें टकराकर प्रतिध्वनित होती है। इस पर्वतका रङ्ग लाल है, इसे सिन्दूरिया पहाड़ कहते हैं। कितनी ही सीधी और टेढ़ी सीढ़ियां मिलती हैं, इन्हें पार करनेपर स्वर्गद्वार मिलता है। यहांसे राह सीधी है। जितने यात्री जाते हैं, उनमेंसे अनेकोंने—यह संख्या लाखोंके लगभग होगी—राहके नीचे अपने नाम खुदवा दिये हैं। इन्हींपरसे होकर यात्रियोंको जाना पड़ता है। जिनकी पदरजसे इन नामवालोंको दैवी कृपा-प्राप्तिका सन्तोष होता है। अगर कोई यात्री अपना नाम खुदवाना चाहे तो यहां खोदनेवाले खड़े रहते हैं, कहनेसे वे तुरन्त नाम खोद देते हैं। लौटकर खुदा हुआ नाम अपनी आंखों देखकर इन्हें पैसे दीजिये। और आगे बढ़नेपर दो घाटियां मिलती हैं। इनकी शोभाका वर्णन नहीं हो सकता। इनकी सुरम्यता हिमालयकी हरी-भरी मनोहर छटाकी याद दिलाती है। इन घाटियोंके पार होनेपर एक मैदान मिलता है और इसे पार करनेहीसे श्रीबालाजीका मन्दिर मिलता है।

यहां ठहरनेके लिये धर्मशालाएं भी बनी हुई हैं। यहां हाथी-बाबाका स्थान भी उतरनेके लिये अच्छा है। एक तीर्थ-सरोवर भी यहां बना हुआ है। मन्दिर जानेसे पहले यहां स्नान कर लेना चाहिये। मन्दिरमें श्रीलक्ष्मणबालाजीके दर्शनोंसे हृदयको अपार आनन्दकी प्राप्ति होती है जिसका वर्णन शक्तिसे बाहरकी बात है। मूर्ति बड़ी ही सुगठित और श्यामवर्णकी बनी हुई अनेकानेक अमूल्य आभूषणोंसे सुसज्जित है। मस्तकपर ऊर्द्धपुण्ड्र तिलक

लगा हुआ है, जो नेत्रोंको भी ढके रहता है। बालाजीके नेत्रोंके दर्शन नहीं कराये जाते। इनके गलेमें शालिग्रामको स्वर्णजटित माला पड़ी हुई है। बहुमूल्य मणिमुक्ताओंकी माला हृदयपर झूमती हुई अन्तरात्माकी सब ग्लानियोंको दूर कर हर्ष-पुलकित कर देती है। श्रीबालाजीकी पूजार्चना हो जानेके बाद, बाहर आकर गोलक भी देख लेना चाहिये। यात्रीगण इसमें रुपया-पैसा आदि छोड़ते हैं। वैभवकी दृष्टिसे अन्य मन्दिरोंसे बालाजीका स्थान बढ़कर है। यहांके इतना ऐश्वर्य और किसी मन्दिरमें नहीं। इधर कुछ दिनोंसे इस मन्दिरकी सम्पूर्ण सम्पदा अंग्रेज-सरकारके हाथोंमें आ गई है।

इस पहाड़पर एक प्रकारकी पत्तियां होती हैं जिनका स्वाद खानेमें बहुत मीठा होता है। हाथीबाबा इन्हीं पत्तियोंको चबा-कर यहां तपस्या करते थे, इस तरह पूरे बारह साल उन्होंने पार कर दिये। यहां पापमोचनी नामका एक तीर्थ और है। यात्री-गण यहां भी स्नान करते हैं। एक कहावत बड़ी मनोरंजक इस लिये मशहूर है। लोग कहते हैं, जो अपने सच्चे मां-बापका है, उसके नहानेसे पानीका रंग बदलता नहीं, नहीं तो पानी लाल पड़ जाता है। लेकिन यह कहावत निर्मूल है। इसपर किसीको ध्यान न देना चाहिये।

यहांसे लौटते समय मार्ग में एक पाताल-गंगा मिलती । लेकिन मार्ग दुर्गम है। लक्ष्मणबालाजीमें यात्रियोंको कमसे कम एक रात जरूर ठहरना चाहिये। फिर उतरते समय "गोविन्दा,

गोविन्दा, गोविन्दा"की गगनभेदी उच्च कण्ठध्वनिसे अचलको चंचल करते हुए पर्वतके पाद देशमें आना चाहिये।

यहांसे रेनीगुण्टा स्टेशनपर सवार होकर कालास्त्रीके लिये रवाना होना चाहिये। यह शिवलिंग है पांच तत्त्वोंमें वायुलिंग माना गया है। कालास्त्री स्टेशनपर उतर जानेपर वहांसे एक मील दूर, स्वर्णा नदी मिलती है। इसे लोग हिलकर ही पार करते हैं। इसका जल बड़ा सुस्वादु, और स्वास्थ्यवर्द्धक है। यहांसे चलनेपर एक पहाड़ मिलता है जिसपर एक अत्यन्त मनोहर मन्दिर अधिष्ठित है। मन्दिरके भीतर जाइये, देखियेगा, शिवजीके सामनें एक भीलकी मूर्ति खड़ी की हुई है। इस भीलका नाम कणप्पा था। इसके सम्बन्धमें लोगोंका यह कहना है कि यह शिव-जीका बड़ा भक्त था। यहां शिवभक्त एक ब्राह्मण भी था। इन महाराजको उस भीलपर बड़ा द्वेष हुआ कि यह क्यों शिव-जीकी पूजा करता है! एक दिन ब्राह्मणने छिपकर देखा कि कणप्पाका लगाया हुआ भोग शिवजी बड़े आदरसे पा रहे हैं। इससे ब्राह्मणको बड़ा आश्चर्य हुआ। थोड़ी ही देरमें शिवजीकी एक आंखसे खून निकलने लगा और वह फूट गई। जब कणप्पाने यह देखा तब झट अपनी आंख फोड़ डाली और शिवजीको नेत्रदान किया। कुछ देरमें शिवजीकी दूसरी आंख भी उसी तरह जाती रही, तब कणप्पाने अपनी दूसरी आंख भी फोड़ डाली और उसकी ज्योति शिवजीकी सेवामें उपस्थित की। यह देख शिवजीका हृदय द्रवीभूत हो गया। आशुतोष उस भील

कणप्पापर परम प्रसन्न हुए । उसे तत्काल नेत्रोंका दान किया और वर-प्रार्थनाके लिये आज्ञा की । कणप्पाने यह मांगा कि प्रभो ! मैं सदा आपके सामने सेवाके लिये खड़ा रहा करूं, उसके सिवा दूसरा वर मुझे और कुछ न चाहिये । तभीसे कणप्पाकी मूर्ति श्रीशिवजीके सामने खड़ी है ।

इन शिवजीको श्रीकालहस्तीश्वर कहते हैं । यह नाम इनका क्यों पड़ा इसके सम्बन्धमें भी एक प्रसिद्धि है । कहते हैं, इन शिवजीके तीन भक्त थे । एकका नाम श्री था (श्री एक प्रकारके कछुएके आकारवाले जानवरको कहते हैं) दूसरेका नाम था काल (यानी सांप) और तीसरे का हस्ती, (हाथी) । ये तीनों ही शिवके परमभक्त थे । एक दिन तीनोंने आपसमें वादविवाद किया और लड़कर अन्तमें सबके सब मारे गये । शिवजीने कृपा करके इन्हें प्राणदान देकर पूछा कि तुम क्या वर मांगते हो ? तब तीनोंने कहा—"महाराज ! आप हमारे तीनोंके नामसे प्रकट होइये ।" उसी दिनसे यह वायुलिंग श्रीकालहस्तीश्वर नामसे प्रसिद्ध हुआ । यह स्थान दक्षिण दिशामें दक्षिण काशीक्षेत्र कहलाता है । जिस यात्रीके पास श्रीशालिग्रामकी प्रतिमा हो उसे एक रात्रि वहां अवश्य ठहरना चाहिये; क्योंकि यहां सुवर्णा नदी और शालिग्रामका संयोग बतलाया जाता है ।

यात्रियोंको चाहिये कि कालास्त्री स्टेशनसे रेनीगुण्टा पहुंच जायं । यहांसे रातको १० बजे एकगाड़ी मनवाड़को छूटती है । इसीसे नासिक पहुंचना चाहिये । २ बजे बाड़ी जङ्कशन आता

है। यहां हैदराबादकी गाड़ी तैयार मिलती है। जिसे जाना हो, उतरकर इसपर बैठ सकता है। गाड़ी आध घण्टा ठहरती है। यह जङ्कशन बहुत बड़ा है। इसके बाद घोंघ जङ्कशन आते ही मनवाड़के लिये गाड़ी बदलनी पड़ती है। मनवाड़में ठहरना हो तो धर्मशाला बनी हुई है। मन्दिरके पीछे जाकर एक पर्वत देखिये। यह ऐसा सुन्दर मालूम होता है कि पर्वत क्या मानो एक विशाल शिवलिंग हो। यह पहाड़ गाड़ीपर बैठे हुए भी यात्री लोग देख सकते हैं। मनवाड़के बाद नासिक जाना चाहिये। नासिकके स्टेशनपर ट्रेम मिलती हैं और तांगे भी बहुत मिलते हैं। रास्तेके सघन पल्लवित वट वृक्षोंकी कतार देखकर अन्तरात्माके अंदर प्राचीन भावकी झलक आ जाती है—मन सोचने लगता है ध्यानस्थ ऋषियोंकी निश्चल समाधिकी बातें। यहां पुलिसकी एक चौकी है। चौकीवाले हरएक यात्रीसे चार-चार आने वसूल किया करते हैं, यह बड़ा ही अनुचित कार्य हो रहा है। इसका बन्द हो जाना परमावश्यक है। तीर्थ हिन्दुओंका है,इस अन्यायसे बेचारे यात्रियोंको बड़ा संकट होता है। यहां गांजा आदि नशेकी चीजोंकी बड़ी तलाशी होती है। यात्रियोंको चाहिये कि पंचवटीमें ही ठहरें। नासिकमें उतरना ठीक नहीं।

पंचवटीमें सबसे पहले रामघाटमें चलकर स्नान आदिसे निवृत्त होना चाहिये। विमल सलिला गोदावरीमें अवगाहन और पिण्डोदक-क्रिया आदि समाप्त करके अपने डेरेको वापस जाना चाहिये। इसके बाद सीतागुफा देखनेकी बारी आती है। दिनके दो

बजे श्रद्धालु यात्रियोंको सीतागुफ़ाकी ओर चलकर उसे देख अपने नेत्रों और आत्माको पवित्र कर लेना चाहिये। यहां पांच वट लगे हुए हैं। गुफा मन्दिरके नीचे बनी हुई है। इसके भीतर चिरागके सहारे उतरना होता है। अन्दर श्रीजानकीजीकी प्रतिमा बनी हुई है।

यहांसे तपोवनका मार्ग भी है। यह वही तपोवन है जहां भगवान श्रीरामचन्द्रजीका बहुत दिनोंतक स्वच्छन्द बिहार हो चुका है। मार्गमें कितने ही मन्दिर मिलते हैं। पुराने अनेक प्रकारके चिह्न और महावीरजीका बड़ा मन्दिर नजर आता है। फिर आगे वह पवित्र स्थान मिलता है जहां गोदावरी और कपिला दोनों नदियां एक दूसरीसे मिलती हैं। इस संगम स्थलको देखते ही दृष्टि थक जाती है, फिर वह किसी दूसरी ओर मुड़ना नहीं चाहती। मनोहर हरे-भरे दृश्य अपनी प्राकृतिक छटासे ऐसे आकर्षक बन रहे हैं कि बातकी बातमें दर्शकोंको अपना बना लेते हैं :—फिर वहांसे लौटना अत्यन्त अप्रिय मालूम होने लगता है। पहाड़के विशाल वक्षःस्थलको जिस प्रबल वेगसे चीरती हुई गोदावरी, कपिलासे मिलनेके लिये, सोत्साह बढ़ती जाती है, वह उद्यम गति, वह आग्रह और वह चञ्चलता, ऐसा कौन है जो देखकर मुग्ध न हो जाय। पहाड़पर कुछ देर ठहरिये तो और भी मनोरंजक स्थल देख पड़ते हैं। यहां तीन खन्दे खोदे गये हैं। उन्हें मोक्ष योनि कहते हैं। पण्डे लोग यात्रियोंको यह कहकर फंसा लेते हैं कि खंदोंमें जाओगे तो मुक्त हो जाओगे, फिर तुम्हें

संसारमें जन्म और मृत्युके चक्करसे छुटकारा मिल जायगा। जब तत्काल-मुक्तिके लालचमें यात्री लोग इसके अन्दर उतर जाते हैं, तब मजा यह होता है कि चक्रव्यूहके भीतर पड़े हुए अनजान योद्धाकी तरह, उससे निकल नहीं सकते,—उसीमें पड़े चीखते रहते हैं। उधर यात्रियोंकी जान तो आफतमें पड़ती है और इधर पण्डे वगैरह ठहाका मार-मारकर पेटका दाना पचाते हैं। जब यात्रियोंके प्राण संकटमें पड़ते हैं, उन्हें उबरनेकी कोई राह नहीं सूझती और वे बिलकुल दीन-भावसे मुक्ति-प्रार्थना करते हैं तब पण्डे महाराज भरसक दानका वचन उनसे कबुलवाकर उन्हें मुक्त करते हैं। यात्रियोंको चाहिये कि इन खण्डोंको बाहरसे ही नमस्कार कर लें, इनके भीतर पैठकर जान आफतमें न डालें। यहांसे काली पहाड़ी मोहनी प्राकृतिक सजावट आदि देखकर तांगेपर सवार हो, अपने डेरे, धर्मशालामें आ जाना चाहिये।

दूसरे दिन तांगेपर बैठकर पांडु-गुफा जाना चाहिये। यह भी एक तीर्थ ही है। यात्रियोंको अवश्य ही यहां जाना चाहिये। यहांके लिये जब यात्री रवाना होते हैं, तब, रास्तेमें, नासिकका चौक आता है। इसमें एक फव्वारा लगा हुआ है। इसे खूब गौर करके देखिये। फव्वारा शिवजीकी जटासे होकर निकलता है, जैसे भगवती भागीरथीकी कलि-कलुष-विनाशिनी धारा। शिवजी कमरसे हाथ टेककर सुदृढ़ दृष्टिसे आकाशकी ओर ताक रहे हैं, मानों गंगावतरणका शुभ मुहूर्त हो। यहांसे आगे एक लम्बा बाजार

मिलता है, जिसमें दाने और तांबा-पीतल आदिके अनेक प्रकारके बरतन बन रहे हैं। यहांके कई बरतन मशहूर हैं। और आगे आपको वनका मार्ग मिलेगा। इस तरह पांच मीलका, सुदर्शन दृश्योंसे हराभरा मनोरम पंचवटीका मार्ग पार कर जाइये, आगे एक पर्वत मिलेगा। चढ़नेके लिये यहां दो-चार डोलियां भी रहती हैं जिससे यात्रियोंको बहुत कुछ सुविधा होती है। अक्सर यात्री लोग पैदल ही पहाड़की चढ़ाई करते हैं। चढ़ते हुए, पहाड़के मध्यभागमें यात्रियोंको पांडु-गुफा मिलती है। यहां खड़े होकर बाहरी प्रकृतिका अनोखापन, संसारपर उसकी सुकुमार दृष्टि आंखे भर देखिये; पर तृप्ति तो शायद ही होगी—देखनेकी लालसा उत्तरोत्तर बढ़ती ही जायगी। यहांसे पहाड़का जितना अंश नीचेकी ओर दिखाई देता है उतना ही ऊपरकी ओर भी। विशाल पर्वतके मध्यस्थलमें मनुष्य एक तृणसे छोटा जान पड़ता है। यहां पांडु-गुफाओंकी संख्या २४ है। परन्तु इनमें दो ही चार नामी देखने लायक और आश्चर्यमें डालनेवाली गुफाएं हैं। इन्हींमें एक छोटी गुफा कहलाती है। इसे देखिये। इसके भीतर पहुंचते ही एक दालान मिलेगा। इसमें २०० दो सौ आदमी आसन मारकर आरामसे बैठ सकते हैं। फिर जरा ऊपर देखिये तो मालूम होगा कि इसकी छत कैसी सफाईसे बनी है। आप उस समयके कारीगरोंको धन्यवाद दिये बिना हरगिज न रहियेगा जिन्होंने किसी आधारके बिना ही इस इतनी चौड़ी छतको पहाड़के बोझसे बचा रखनेकी गारण्टी ले रक्खी थी। फिर एक

दूसरी गुफा देखिये । इसका विस्तार बहुत है । देखकर आश्चर्य होता है कि यह गुफा नहीं, कभी कोई राज-दरबार रहा होगा । इसके अन्दर छोटे छोटे कमरे भी हैं, इनमें चौखट नहीं है, न कोई दरवाजा या झरोखा ही है । प्रकाशके लिये बस भीतरसे पहाड़की चट्टान काट दी गई है । इन कमरोंके सामने एक बहुत बड़ा चौक है । जिसमें चार-पांच सौ आदमी बैठकर सभा या दरबार कर सकते हैं । इसकी छतको देखकर यात्री हैरान हो जाते हैं । प्राचीन कालकी महत्ता और पूर्वजोंकी शिल्पकला-सम्बन्धिनी अजेय बुद्धिका स्मरण कर उन्हें रोमांच होता है । नस-नसमें आत्मगौरवको स्फूर्ति संचरित होने लगती है । जी हर्षोत्फुल्ल हो जाता है । यह कम आश्चर्यकी बात नहीं कि भीम-भयंकर गिरिराजका भार धारण किये हुए भी इतना बड़ा चौकोर दालान बिना किसी आधारके टिका हुआ हो । तिसपर तअज्जुब यह कि अबतक कहीं छत जरा टूटी भी नहीं ! इस गुफामें चक्कियोंके निशान अब भी मिलते हैं, जिनसे अनुमान किया जाता है कि जो लोग यहां रहते थे उन्हें शायद नीचे उतरनेकी जरूरत नहीं पड़ती थी, वे अपने निर्वाहकी कुल आवश्यकताएं यहींसे पूरी कर लेते थे । खाने-पीनेके लिये अन्न अब भी यहां पैदा होता है, पहाड़पर ही काफी समतल भूमि (तराई) है और खेतीसे अन्न भी यहां प्रचुर पैदा होता है । इसलिये निस्सन्देह होकर कहना चाहिये कि जो लोग इस गुहाके अधिवासी थे वे सम्पन्न भी थे और यहीं उनका गुजर भी होता था । यह गुफा

सुरक्षित है। अगर कोई दुश्मन इसपर कब्जा करनेका दुस्साहस कर बैठे तो इसपर अधिकार कर लेना उसके लिये कोई बांयें हाथका खेल न होगा। क्योंकि नीचेसे तो इसपर किसी तरहका वार हो सकता ही नहीं। रही ऊपर चढ़कर अधिकार करनेकी बात, सो पत्थरोंकी वर्षा ही यहांके वाशिन्दोंके लिये एक ऐसा अमोघ अस्त्र है जिसका व्यर्थ होना विधाताकी रेख ही मिटा देना है। इस गुफाकी स्थिति देखकर जान पड़ता है कि यह या तो भिक्षुओंका अड्डा रहा होगा या कोई एकान्तप्रिय अमर शूर, अपने चुने हुए वीर सहायकोंके साथ, इस सुदृढ़ किलेमें रहता रहा होगा। कुछ भी हो, कीर्तिकी दृष्टिसे, कारीगरीकी दृष्टिसे, प्राचीन स्मृतिकी दृष्टिसे,यह स्थान बहुत ही सुन्दर और श्रेष्ठ है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

कुछ ऊपर चढ़नेसे जलप्रपात और एक गुफा और मिलती है। इन गुफाओंके पास जलके स्रोत हर वक्त बहते रहते हैं। जल बड़ा ही सुस्वादु और पाचन-शक्ति बढ़ानेवाला है। इन गुफाओंके नामपर जरा ध्यान देना चाहिये। गुफाएं पाण्डुगुफा कहलाती हैं, तो क्या ये पाण्डवोंकी बनाई हुई हैं? इनका कोई ऐसा इतिहास अबतक नहीं मिला। यह लोकोक्तिमात्रके आधारपर प्राचीन कालसे 'पाण्डु गुफा' कहलाती आ रही हैं। लोग कहते हैं कि किसी समय पाण्डवोंने यहां कुछ कालके लिये वास किया था। कुछ भी हो, यह आकर्षक है और सत्य इतिहासके अभावसे अतीतके सन्दिग्ध गर्भमें डालनेवाला है। इसे

देखने और पता लगानेके लिये बड़े बड़े विद्वान् यहां आये, बहुत कोशिश की, बड़ी छानबीन की,पर पता ठीक ठीक न लगा कि यह गुफा किसने बनाई। एक शिलालेख अभीतक इस गुफाके सामने रखा है। उसकी भाषा पाली बतलाई जाती है। लेकिन अभीतक कोई इसका पाठोद्धार नहीं कर सका। अनुमानसे या जहां जितना हो सका है, पढ़कर विद्वानोंने कहा है कि यह ३००० वर्ष पहलेका बना हुआ है। इस गोदावरी-क्षेत्रमें जितनी विचित्रताएं देखनेमें आती हैं, उनमें यह एक प्रधान है।

इस प्रकार पर्वतांग प्रत्यक्ष करते हुए यात्री नीचे उतरते हैं। पहाड़ी समतल भूमिमें खेती होती है। देखकर यात्रियोंको एक दूसरा ही हर्ष अपनी लहरोंमें बढ़ा ले जाता है। यहांके हल बहुत बड़े होते हैं और बैलोंका तो कहना ही क्या, जैसे दीर्घ-काय, वैसे ही ये बलवान भी होते हैं। काश्तकार मराठोंकी लम्बी पगड़ी तो और गजब ढाती है। उस पगड़ीके साथ ही वीर महाराष्ट्राधिप शिवाजीकी याद अन्तरात्मामें हिन्दूगर्वकी आग भड़का देती है।

मार्गकी मोहिनी छटा देखते हुए यात्री आनन्दपूर्वक पंचवटी पहुंचते हैं। यहां, गोदावरी-तटपर, सूर्यास्तके समयका दृश्य भी अवश्य ही देखना चाहिये। भारतवर्षके तीर्थस्थलोंमें प्रकृतिकी कितनी कृपा है, वह कितनी सावधानीसे वहांकी शोभा बढ़ानेमें तत्पर रहती है, इसकी वर्णना करना दुस्साध्य ही नहीं, असाध्य भी है। गोदावरी-तटपर पुण्य धौतात्मा सहस्रों नर-नारियोंका

सम्मेलन, गोदावरीके चंचल जलोच्छ्वासों, आवर्तों और रंगीली तरंगोंपर लोगोंकी मुग्ध दृष्टि; दूर-प्रसरित वक्रधाराओंकी धूम्र धूमर रेखा; वनविहंगमोंकी शाखाओंपर प्रत्यावर्तनानन्दध्वनि; विहंगशावकोंका मधुर स्वागत-कण्ठ, साथ ही सन्ध्याकी तपस्विनी शान्त प्रकृति; सब एक साथ मिलकर दर्शकोंके हृदयपर किस उदार भावकी प्रशान्ति लाते हैं, यह जड़ लेखनीद्वारा व्यक्त करना सर्वथा असम्भव है। कहीं सामने कथा होती है, कहीं भजन-रागिनी जमी हुई है, कहीं कहीं सभाएं हो रही हैं— धार्मिक व्याख्यानोंको झड़ी लग रही है, कहीं बाजार खुल गये हैं, कहीं लोग आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं, कहीं फूलोंके गजरे और मालाएं बिकती हैं, कहीं मिठाईकी दूकानें सजी नज़र आती हैं। घाटके इस पार और उस पार कितने ही देशोंकी देवियां कपड़े धोती हुई देख पड़ती हैं। दृश्य इतना सुन्दर हो जाता है, मानों उस समय सुन्दरता स्वयं दिव्यरूप धारण कर लोगोंको मुग्ध करनेके लिये गोदावरीके तटपर विराजमान हो जाती है। पंचवटीमें अगर कई क्षेत्र हो जायं तो गरीबोंकी बड़ी सहायता हो। पंचवटीमें अच्छा मन्दिर श्रीरामचन्द्रजीका है। यह राममन्दिरके नामसे मशहूर है। गोदावरीसेवनका लाभ लेनेवाले पंचवटीमें ही वास करते हैं। वे नासिकमें नहीं रहते।

तीसरे दिन सुबहको मोटर या तांगेपर बैठकर शिवलिंगोंमें प्रधान,—त्र्यम्बकेश्वर महादेवके दर्शन करने चाहिये। चलते समय मार्गका निरीक्षण करते चलिये। सड़क विशेष अच्छी नहीं

है। म्यूनिसिपल्टीके ध्यान देनेकी आवश्यकता है। त्र्यम्बके-श्वरके स्थानपर पहुंचते ही आपको धर्मशाला मिलेगी। यहां ठहर जाइये और प्रधान तीर्थमें स्नान करके दर्शनोंके लिये मन्दिर जाइये। मन्दिर बहुत ही प्राचीन है। दर्शन करनेवाले यात्रियोंको यहांके अनुशासनके अनुसार ही चलना पड़ता है। यहांका नियम यह है कि सन्ध्योपासन जाननेवाला ब्राह्मण ही यहां प्रवेश पाता है। दूसरे वर्णवाला, जैसे क्षत्रिय, वैश्य वगैरः, मन्दिरके द्वारसे ही दर्शन पाते हैं। भीतर जलहरीमें तीन मुखोंद्वारा जल आता है। मन्दिर बड़ा ही शान्तिमय है। सन्ध्या जाननेवाले ब्राह्मणोंके सिवा और लोग बाहरसे ही दर्शन करके आनन्द मनाते हैं। प्रसाद धारण कर परिक्रमा समाप्त करने-में एक तरहसे प्रातःकालका समय व्यतीत हो जाता है। जब ४ बजेका समय हो तब ब्रह्मगिरि पर्वतकी शोभा देखिये। यह बहुत ही प्रसिद्ध है। इसकी सीढ़ियां इतनी चौड़ी हैं कि सात आदमी एक साथ पर्वतकी चढ़ाई कर सकते हैं। दृश्योंका तो कुछ कहना ही नहीं। पार्वत्य शोभाको देखकर हरएक हृदय-में, चाहे उसमें कैसा ही कठोर भाव क्यों न हो, आनन्दकी सरस धारा उमड़ चलती है। पर्वतकी चढ़ाई करते हुए यात्री जब ऊपर पहुंचते हैं, तब एक गोमुखी पर्वत ऊपर ही मिलता है। इस गोमुखी गंगाके अमृतमय जलको चरणामृत रूपमें यात्री पान करते हैं। थोड़ासा जल पीनेपर इच्छा बढ़ जाती है। फिर तो भरपेट पीनेके लिये जी ललचता रहता है। इस पर्वतपर

छोटी छोटी गुफाएं बनी हुई हैं जिनके लिये यह कहावत मशहूर है कि ये गोरखनाथजीकी हैं। पहाड़ोंके ऊपर देखिये तो हरी-भरी पत्तियोंकी लहलही छटा देखते ही बनती है। लाल मुंह-वाले बन्दर तो और रंग जमाये रहते हैं। किलोलें करते हुए एक डालीसे दूसरी डालीपर उछल उछलकर आते-जाते रहते हैं। एक मार्ग पहाड़के ऊपर भी गया है। परन्तु यह बहुत दुर्गम है। इसलिये यात्री उधर नहीं जाते।

गोमुखीके दर्शन कर रात नासिकमें बितानी चाहिये। सुबह पंचवटी पहुंच, प्रसाद पानेके बाद, बम्बईकी गाड़ीसे चलनेके लिये तयार होना चाहिये। गाड़ी साढ़े दस बजे छूटती है। इसी गाड़ीसे चलना अच्छा है। क्योंकि यह अच्छे समयसे पहुंचती है। स्टेशनपर चलते समय देवियां जब तांगेपर बैठी हुई, भक्ति-रसमें सराबोर, अच्छे अच्छे भजन गाने लगती हैं, तब वहांके लोगोंको घर-बारके जरूरी काम-काजकी भी सुध नहीं रहती—वे लोग मंत्रमुग्धकी तरह, ध्यान लगा, बड़ी भक्ति और श्रद्धा-भावसे उन कोमल कण्ठियोंका गाना सुनते हैं। यहांकी स्त्रियोंमें धार्मिक भावका जैसा आकर्षक रंग देखनेमें आता है वैसा और कहीं नहीं। सात मीलकी सुहावनी सड़क पार करके यात्री लोग स्टेशनपर पहुंचते हैं।

गाड़ी १०॥ साढ़े दस बजे आती है। यात्री लोग आरामसे बम्बईको रवाना हो जाते हैं। नासिक छूटनेपर, एक स्टेशन देव-लाली नामका आता है। यहां पल्टनकी छावनी है। यहांसे

धोला जंकशन आता है। यह स्टेशन बड़ा है। यहां गाड़ीमें दो इंजन लगाये जाते हैं—एक आगे तो रहता ही है, एक पीछे भी जोड़ दिया जाता है। यह रास्ता पहाड़ी है। कितनी ही गुफाओं-से होकर गाड़ी गुजरती है। पहले इनकी संख्या २५ थी। अब १३ ही रह गई हैं। जब इनके भीतरसे गाड़ी चलती है तब गाड़ीमें रोशनी कर दी जाती है। दो-तीन गुफाएं बहुत बड़ी मिलती हैं। पार करते समय गाड़ी बार बार सीटी देती है। इन्हें पार कर गाड़ी एक पुलके पास पहुंचती है जो दो पर्वतोंकी चोटियोंपर बांधा गया है। समतल भूमिसे यह पुल ३०० फीट ऊंचा है। नीचेकी जमीन पाताल-सी जान पड़ती है। इसके आगे कल्याणी जंकशन आता है, फिर बोर्डी बन्दर। बम्बईमें उतरनेके स्थान बहुतसे हैं जैसे पंचायती बाड़ी, माधोबाग, हीराबाग, नेमाणीकी बाडी आदि कई स्थान हैं। जहां सुविधा और आराम हो, यात्रियोंको वहीं उतरना चाहिये। यात्रीगण इस महानगरीको केवल ऐशोआराम और सैरकी ही जगह न सोच लें, नहीं, यह बड़ी पवित्र भूमि है। प्राचीन कालमें इस जगहको मोहमयी कहते थे, यह नाम इसके प्राकृतिक सौन्दर्यको देखकर रक्खा गया था। मोहमयी नाम होनेपर भी, यह वास्तवमें परशुराम-क्षेत्र है। बाल-केश्वरके मार्गमें परशुराम-गंगा, पक्के तालाबके पास, अब भी मौजूद है। तारीफ तो यह कि समुद्रके किनारे होनेपर भी इसका जल बड़ा ही मधुर है। बम्बईमें सबसे प्रधान दर्शन मुंबादेवीके गिने जाते हैं। देवी-मन्दिर होनेपर भी यहां हिंसा नहीं हो पाती।

पूजन सात्विक भावसे होता है। इसके बाद माधोबागमें श्रीलक्ष्मी-नारायणजीके दर्शन होते हैं। यह मूर्ति बड़ी ही मनोहर है। देखते ही जी मुग्ध हो जाता है। जितना भी देखिये, आंखोंकी प्यास नहीं बुझती। ऐसी सुसंगठित सलोनी मूर्ति कहीं भी देखनेमें नहीं आती। फिर सत्यनारायणजी और श्रीसूर्यभगवानके दर्शन भी अत्यन्त मनोहर होते हैं। बम्बईमें तुलसीतालाब, मरीयन लेन, चौपाटी देखनेयोग्य हैं। यहांका रानीबाग भी यात्रियोंको देख लेना चाहिये। कमसे कम तीन दिन रहकर द्वारका-धाम जानेका विचार करना अच्छा होगा।

द्वारकाधाम जानेके दो मार्ग हैं। एक बम्बईसे ही है, जहाज-द्वारा। लेकिन यह मार्ग सुविधाजनक नहीं। दिनको चार बजे जहाज छूटता है और पहुंचता है दूसरे दिन, आठ पहर चलकर, उसी वक्त, चार बजे। किराया ४) चार रुपया था, अब आठ रुपया हो गया है। दूसरा मार्ग आरामप्रद है। यह गाड़ीसे तै किया जाता है। बम्बईसे रातके आठ बजे अहमदाबाद डाक छूटती है। रातभर चलकर दूसरे दिन सुबहको स्टेशनपर गाड़ी पहुंच जाती है। बड़ा आराम रहता है। इसके आगे यात्री आनन्दपूर्वक डाकोरजी पहुंच जाते हैं।

डाकोरजी

स्टेशनसे बाहर आते ही पण्डे मिलते हैं,बगलमें बहियां डाले हुए। ये हरएक यात्रीसे उसका पता पूछते हैं। उत्तर देते देते यात्रियोंका धैर्य ही जाता रहता है। एक-दो हो तो उत्तर भी दें, यहां तो एक ही उत्तर सैकड़ों बार कहते कहते जी परेशान हो जाता है। लेकिन यात्रियोंको यहां अपने स्वभावपर अधिकार रखना चाहिये। उन्हें क्रोधमें आकर कोई अनुचित शब्द न कहना चाहिये। साधारणतया इतना ही कह देना बहुत है कि हमलोग रामबाग जायंगे,हमारा पण्डा अमुक है। वहीं उसको मिल जायँगे इतना कहकर तांगेमें बैठकर रामबागके लिये रवाना होना चाहिये। रामबागमें उतरना अच्छा है। वहां आराम भी है।

रामबागमें उतरनेपर पण्डा भी मिल जायगा। डाकोरजीमें पण्डोंके १००० घर हैं। यहां एक गंगा भी है। इसका जल बड़ा ही स्वच्छ और सुस्वादु है। यह लम्बी-चौड़ी है, कोई मामूली नहीं। इसमें स्नान समाप्त कर डाकोरजी चलनेकी तैयारी करनी चाहिये। डाकोरजीका मन्दिर बहुत ही सुन्दर है। मन्दिर गोलाकार है। चारों ओर तुलसीकी डालियां बिकती हैं। कहीं कोई फूलोंकी माला गूँथता है तो कहीं उच्चस्वरसे स्त्रियोंके मधुर संगीतकी तान उठ रही है,कहीं पुराणोंकी कथा हो रही है,कहीं और ही रंग जमा हुआ है। चारों ओरसे सजीविताके ही दृश्य

नजर आते हैं। मन्दिरमें सोने-चांदीके कपाट लगे हुए हैं। श्रीभगवानके सभा-मन्दिरकी चौखट तो अत्यन्त सुन्दर है। उसकी कारीगरी बड़ी ही विचित्र और खास चित्रित है।

पहलेपहल राजभोगके समय दर्शन करना अच्छा है। स्त्रियोंके लिये दर्शन करनेकी और ही व्यवस्था है। जब वे कतारकी कतारमें खड़ी होकर श्रीभगवानको देखनेके लिये एक दृष्टिसे देखती रहती हैं। एक ओर पुरुष खड़े रहते हैं। यह प्रथा बड़ी अच्छी है। जब राजभोगके समय पट खुलता है, तब बड़े जोरोंसे लोग दर्शनोंके लिये टूटते हैं। दर्शनोंके बाद जयध्वनिके सहस्र कण्ठोंसे मन्दिर गूंज उठता है। श्रीरणछोड़ स्वामीके कितने दिव्य दर्शन हैं कि वाह! तबीयत भर जाती है। गुलाबी पोशाकमें सफेद किनारी क्या गजब ढातीहै। सिरपर सुन्दर रत्नजटित मुकुट, हाथोंमें स्वर्णमुरली लिये हुए, तेजोमय श्यामल शरीरपर अनेकों आभूषण धारण किये, भक्तोंको प्रभु अभयदान दे रहे हैं। यह वही प्रतिमा है जो द्वारका-धाममें विराजमान थी।

लोकोक्ति है कि रामदास विजयसिंह नामका एक बड़ा भक्त था। वह रोज़ द्वारकाजीतक पैदल चलकर इनके दर्शन करता था। इसलिये उसकी स्त्री बहुत नाराज़ रहती थी। एक दिन वह द्वारका गया और स्त्रीके डरसे रातको श्रीजीके पीछे पड़कर सो रहा। तब स्वप्नमें रामदासको आज्ञा हुई कि हे रामदास, तुमको बड़ा कष्ट होता है, तुम मेरी मूर्तिको डाकोरजी ले चलो, मेरे द्वारके ताले खुल गये हैं। पहले तो रामदास बहुत डरे कि कोई

देख न ले, लेकिन पीछेसे बड़ी हिम्मत की। प्रभुको बाहर उठा लाया। किस्मतकी बात, और दैवबल तो उसके साथ था ही, मिल गई आगे एक टूटी गाड़ी। फिर क्या, उसीपर रखकर जवान ले आया डाकोरमें। इधर सुबहको जब पण्डोंने देखा कि प्रतिमा लापता है तो बहुत घबड़ाये। लेकिन उनकी शंका पूरी उतरी। उन्होंने सोचा कि कल रामदास यहां पड़ा था, मूर्ति वही उठा ले गया होगा। बस, चल पड़े रामदासके मकान, डाकोरको। उनके साथ काबा-जातिवाले भी उनकी मददके लिये हो लिये। जब रामदासको यह मालूम हुआ, तब उसने द्वारकाधीशको उठाकर चुपकेसे गोमती नदीमें डाल दिया। पंडोंने पहले रामदाससे भलेमानसोंकी तरह पूछा, फिर धमकाया; लेकिन जब उससे कुछ पता न लगा, तब आप चारों ओर ढूंढ़ने लगे। मूर्ति कहीं न मिली। पंडे सब जगह खोजकर थक गये। परन्तु हिम्मत नहीं छोड़ी। अन्तमें, बड़े बड़े भाले लेकर वे गोमतीमें ढूंढ़ने लगे। जगह-जगह पानीमें भाले गड़ाकर टटोलते फिरते थे। जहां श्रीभगवानकी मूर्ति थी एक बार वहां भी भाला पहुंच गया और ज़रा उनकी देहमें गड़ भी गया। भालेके लगनेके साथ ही, जलमें ऊपरतक लहू निकल आया जिसे देख पण्डे बहुत घबराये; परन्तु उन्होंने पता लगा ही तो लिया, फिर सबलोग रामदासकी खबर लेनेके लिये लपके रामदास बेचारे पकड़े गये, परन्तु उसपर भगवान ही प्रसन्न थे तो दूसरा कोई क्या बिगाड़ता ? रातको पण्डोंने स्वप्न देखा। भगवानने आज्ञा दी कि मुझे

तुम लोग न ले जाओ। आजके नौ महीने बाद ऐसी ही मूर्ति तुम्हें द्वारकाके कुएं में मिलेगी। इससे पहले मुझे यहांसे न निकालो और सुबह होते ही मेरे बराबर सुवर्ण रामदाससे ले लो। सुबह होते ही, गोमतीमें एक तरफ पलड़े में सोनेकी एक नथनी और दूसरी ओर श्रीजीको रखकर पण्डे तौलने लगे तो रामदासने कहा, ठहरो, मैं बतलाता हूं, उसीके अनुसार तौलो। उसकी इस बातपर सब लोग बहुत हँसे। लेकिन रामदासने इसकी कुछ परवाह नहीं की, वह अपने हठपर दृढ़ रहा। कहा, देखो अभी पलड़ा बराबर हुआ जाता है। इसके बाद एक तुलसीदल रखते ही पलड़ा बराबर हो गया। प्रभुकी अपार लीला देख लोग चकित हो गये। सबको मालूम हो गया कि प्रभुकी इच्छा यहीं रहनेकी है। तभीसे श्रीजी डाकोरमें हैं।

इसके बाद सब पण्डे अपने यहां द्वारकाको लौट गये। वहां उन्हें सात-आठ महीनेतक तो धैर्य रहा। परन्तु इससे आगे वह धैर्य न रख सके। पता लगानेके लिये उसी कुएं में पैठ गये। उसकी खोजकी तो मूर्ति मिल गई। परन्तु चूंकि पूरे दिनोंतक उन्हें धैर्य नहीं रहा, इसलिये प्रभुकी मूर्ति सर्वांग सम्पूर्ण न हो पाई। वह असंगठित रूपमें ही बाहर निकाल ली गई थी, इसलिये स्वरूप वैसा न बन पाया, वह अधूरा ही रह गया। यात्रियोंको यह बात बहुत अच्छी तरह मालूम हो जाती है, जब वे दोनों मूर्तियोंको प्रत्यक्ष करते हैं। डाकोरकी मूर्ति जैसी सुन्दर

और सुगठित है, वैसीही द्वारकाधामकी। रामदासका छोटासा मन्दिर देखिये। रामदास तुलसीका पेड़ हथेलीमें लिये खड़ा है। रामदासको देखकर यात्रियोंको भक्तवत्सल श्री भगवानकी कृपा याद आ जाती है। उनकी आंखोंमें आंसू आ जाते हैं। भक्तिकी महिमा रोम रोमसे छलकती रहती है।

अब हमें यह जानना चाहिये कि इस स्थानका नाम डाकोरजी क्यों पड़ा। इसका इतिहास यहांके लोगोंमें इस तरह प्रसिद्ध है कि यहां डंक नामके किसी ऋषिने तपस्याकी थी। डंकपुर क्षेत्र नाम इसीसे पड़ा। अबतक गोमतीपर जहां तुला है डंकेश्वर महादेव मौजूद हैं। डाकोरजीमें, बृहस्पतिको हाथीपर बैठकर छलिया गोपाल, ग्राममें घूमते हैं।

दर्शन कर डेरे डेरेमें जब यात्री आवें और उनके सोनेका समय हो, तब एक एक डण्डा अपने पास जरूर रख लें। क्योंकि कुत्ते उनके पास आकर सो रहते हैं,यहां मच्छड़ भी बहुत हैं। एक रात डाकोरजीमें रहकर, दूसरे दिन शामको पांच बजे स्टेशनपर पहुंच जाना चाहिये। स्टेशन तो छोटा ही है, पर चहलपहल खूब रहती है। गाड़ी सात बजे आती है। यह यहां जितनी खाली होती है उतनी ही भर भी जाती है। आठ बजते ही अहमदाबाद आ जाता है। दस बजे वीर-ग्रामकी गाड़ीपर सवार हो जाना चाहिये। वीरग्राममें गाड़ी बदल जाती है। यहां छोटी लाइन है। गाड़ीपर सवार हो लीजिये, गाड़ी एक बजे बड़वान स्टेशन पहुंचेगी। यहां आपको शामके ५ बजे एक नदीके किनारे वांकानेर

नामका ग्राम मिलेगा। फिर राजकोट। राजकोट बहुत बड़ा शहर है। इसमें तीन स्टेशन लगते हैं। यहांके लोग पाजामा और लंबी अंगरखी पहने, बड़े बड़े पगड़ डाटे, दुपट्टा लपेटे, कमरमें तलवार बांधे रहते हैं। ये बड़े शूरवीर मालूम होते हैं। यहांका राज्य भी बहुत बड़ा है। इसके बाद सात बजे जतलसर जंकशन मिलेगा। यहां उतरना पड़ता है। रातको चार बजे गाड़ी मिलती है। सवार हो जाइये। दिनके १०बजे सुदामापुरी (पोर बन्दर)मिलती हैयहीं यात्रियोंको उतरना चाहिये। पास ही एक धर्मशाला है। यहां अच्छा मैदान भी है, खूब खुली हवा आया करती है। दिनभर विश्राम कर तीन बजे घोड़ेगाड़ीमें बैठ सुदामापुरीके दर्शन करना चाहिये। प्रधान मन्दिर सुदामाजीका है। यह मन्दिर संगमर्मरका बहुत ही सुडौल बना हुआ है। भीतर श्रीसुदामाजोकी मूर्ति विराजमान है। ये वही श्रीकृष्णजीके परम मित्र सुदामा हैं जो कभी अत्यन्त दरिद्र थे। मन्दिरके सामने एक बड़ा भाग और है। इसमें पुराणोंकी कथा हुआ करती है। स्त्री-पुरुष सैकड़ोंकी संख्यामें बैठे सुनते रहते हैं।मन्दिरका चौक बड़ा ही सुन्दर मालूम होता है। यहांपर इस देशकी स्त्रियां हरिकीर्तन किया करती हैं और पुरुष डंडियां बजाते हुए प्रभुके गुणानुवाद गाया करते हैं। यहां थोड़ी देर विश्राम कर अनादिकालकी बनी पुरानी सुदामापुरी देखनेके लिये रवाना होना चाहिये।

बाजारमें एक बड़ा चौक है। इसमें चारों ओरसे दूकानें लगी हुई हैं। छोटे छोटे मकानात एक पुराने ही ढंगके बन नजर आते

नामका ग्राम मिलेगा । फिर राजकोट । राजकोट बहुत बड़ा शहर है । इसमें तीन स्टेशन लगते हैं । यहांके लोग पाजामा और लंबी अंगरखी पहने, बड़े बड़े पग्गड़ डाटे, दुपट्टा लपेटे, कमरमें तलवार बांधे रहते हैं। ये बड़े शूरवीर मालूम होते हैं। यहांका राज्य भी बहुत बड़ा है। इसके बाद सात बजे जतलसर जंकशन मिलेगा । यहां उतरना पड़ता है । रातको चार बजे गाड़ी मिलती है । सवार हो जाइये । दिनके १०बजे सुदामापुरी (पोर बन्दर)मिलती है।यहीं यात्रियोंको उतरना चाहिये । पास ही एक धर्मशाला है। यहां अच्छा मैदान भी है, खूब खुली हवा आया करती है। दिनभर विश्राम कर तीन बजे घोड़ेगाड़ीमें बैठ सुदामापुरीके दर्शन करना चाहिये । प्रधान मन्दिर सुदामाजीका है। यह मन्दिर संगमर्मरका बहुत ही सुडौल बना हुआ है। भीतर श्रीसुदामाजीकी मूर्ति विराजमान है । ये वही श्रीकृष्णजीके परम मित्र सुदामा हैं जो कभी अत्यन्त दरिद्र थे । मन्दिरके सामने एक बड़ा भाग और है। इसमें पुराणोंकी कथा हुआ करती है। स्त्री-पुरुष सैकड़ोंकी संख्यामें बैठे सुनते रहते हैं।मन्दिरका चौक बड़ा ही सुन्दर मालूम होता है। यहांपर इस देशकी स्त्रियां हरिकीर्तन कया करती हैं और पुरुष डंडियां बजाते हुए प्रभुके गुणानुवाद गाया करते हैं । यहां थोड़ी देर विश्राम कर अनादिकालकी बनी पुरानी सुदामापुरी देखनेके लिये रवाना होना चाहिये ।

बाजारमें एक बड़ा चौक है । इसमें चारों ओरसे दूकानें लगी हुई हैं । छोटे छोटे मकानात एक पुराने ही ढंगके बन नजर आते

हैं। फिर समुद्रके किनारेसे होकर चलिये। इसके तटकी इमारतें बड़ी नफीस और आलीशान हैं। यहां आफिस भी कितने ही हैं, पोरबन्दरका दृश्य भी अपने ढंगका एक ही है। यहां लाइब्रेरी भी है। यहांके राजा राणासाहब हैं। वे कायस्थ हैं। महात्मा गान्धीजीके पिता इस राज्यके मन्त्री रह चुके हैं। महात्माजी यहीं पैदा हुए। इस नगरमें समुद्रके तटपर सीमैण्टके कारखाने और पत्थरोंका कारोबार तरक्कीपर है। कभी कभी मच्छड़ोंका जोर इतना बढ़ता है कि यात्री दूसरी सब बातें भूलकर उसीका ध्यान करने लगते हैं। एक मछरी सापमें रखना आवश्यक है।

कुछ दिन पहले यात्री लोग बैलगाड़ियोंसे द्वारकाधामकी यात्रा करते थे। यह यहांसे ४० कोस अन्दाजन दूर है। मार्ग पथरीला और बीहड़ है। रास्तेभरमें यात्रियोंकी दुर्दशा हो जाती थी। लेकिन धर्मप्राण यात्री श्रीभगवानके नामपर यह सब कष्ट और मार्गश्रम झेल लेते हैं। अब भी इस तरहकी यात्राएं हुआ करती हैं। लेकिन सुविधा भी अब सब तरहकी रेलद्वारा हो गई है। अब तो द्वारकाधामतक रेलगाड़ी दौड़ने लगी है। सुदामापुरीसे जतलसरमें पहुंच जूनागढ़की गाड़ीमें सवार होना चाहिये। कुछ ही स्टेशनोंके बाद जूनागढ़ मिलता है।

———

जूनागढ़ गिरनार

—०—

स्टेशनसे उतरते ही यात्रियोंको एक पूर्वद्वार मिलता है। यह बहुत ही सुन्दर बना हुआ है। इसके ऊपर एक घड़ी लगी हुई है। जब यात्री पहुंचते हैं तब इसमें पांच बजकर कुछ मिनट होते हैं। द्वारके सामने एक सिंह, काले पत्थरका बना, बैठा हुआ है। इस द्वारके भीतर जाते ही एक साफ सड़क मिलती है। दोनों ओर अच्छी अच्छी इमारते हैं। बाजार लगा रहता है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों यहां आनन्दपूर्वक विहार करते रहते हैं। बाजारमें फल-फूल ताजे मिलते हैं। सीताफल यहांका नामी होता है। सड़कसे इमारतों और बाजारका दृश्य देखते हुए यात्री लोग जूनागढ़के किलेके पास पहुंचते हैं। अक्सर यहीं यात्रीलोग ठहरते हैं। यहां एक धर्मशाला है। यात्रियोंको यहां अपना कार्यक्रम तैयार कर लेना चाहिये। पहले दिन इन्द्रेश्वर महादेवके दर्शन करें। पहले-पहल नरसीने इन्हें प्रसन्न किया था। यह एक तीर्थरूपमें है। इसके पास पहुंचते ही पहाड़ोंके मध्यमें श्रीमहादेवजीका छोटासा मन्दिर है। इसमें कुछ ब्रह्मचारी वास करते हैं। यह स्थान बिलकुल निर्जन और शान्तिमय है। यहीं नरसीने शिवभक्तिकी साधन की थी। यहांसे चलकर नवाबशाहका बाग देखना चाहिये।

नवाबशाहके बागमें फाटकके सामने ही गाड़ियोंसे यात्रियों-को उतरना पड़ता है। फिर वे बागकी बहार देखनेमें जी लगाते हैं।

बाग क्या है, साक्षात् शान्ति-निकेतन ! झरोखे और द्वार देखिये तो नक्काशीपर जी मुग्ध हो जाता है। उस कारीगरकी बलिहारी है जिसने इस तरहकी साफ कलाका नमूना इस सभ्यताभिमानी संसारको दिखलाया। भीतर हर तरहके सुन्दर सुन्दर सुगन्धित फूलोंकी अलग अलग क्यारियां देख पड़ती हैं। फूलोंके सौन्दर्यपर यात्रियोंको अधिक मोह हो जानेपर भी उन्हें हरगिज उनमें हाथ न लगाना चाहिये। क्योंकि इससे उनके अपमान हो जानेका डर है। फूल सुरक्षित रहते हैं। देखकर आखें तृप्त कर लीजिये। बस, फिर आगे महल मिलता है। यात्री आगे बढ़ते हैं, तो एक तरफ एक कांचके बरतनमें एक गोलोचनका गोला देख पड़ता है। मनुष्योंके उपकारके लिये, गोमाताके शरीरसे कैसी दवा ईश्वरने पैदा की कि देखकर चकित हो जाना पड़ता है। फिर सजाई हुई बहुमूल्य चीजोंको देखते चलिये। कांचके सामान तो बहुत तरहके हैं। वहांसे सिंहोंकी जगह देखिये कि कैसे कैसे सिंह पड़े हुए हैं। सिंह प्रायः सब देशोंके हैं,जहां जहां वे पाये जाते हैं। भारतवर्षका सिंह बड़ा जबरदस्त पूरे नौ हाथका होता है। इसे नौहत्था शेर कहते हैं। इसका रंग काला है। अफ्रिकाके भी शेर यहां मौजूद हैं। यहांके नवाबको शेरोंका बड़ा शौक है। इतना शेरोंका शौकीन शायद ही कोई दूसरा नवाब या राजा होगा। पंचमजार्ज जब आये थे तब यहांसे दस शेर, बंबईके रानीबागमें, यहांके नवाबसाहबने, भारत-सम्राटके देखनेके लिये, भेजवा दिये थे।

बाग देखकर यात्रियोंको नरसीजीका मन्दिर देखना चाहिये। चौकसे एक गोलाकार चबूतरा देख पड़ता है। इस चबूतरेके चारों ओर सूरदासोंकी मण्डली भजन गा-गाकर चक्कर: लगाया करती थी। पहलेसे अब स्थानका दृश्य बदल गया है। पहले इतनी तड़क-भड़क न थी। अब तो इस मन्दिरमें सोने-चांदीके कपाट, सुन्दर चौखट और संगममर्रका सभा-मन्दिर बन गया है, और नरसीजी दिव्य भवनमें विराजमान हो गये हैं। हजारों दर्शक दर्शन करनेको आते हैं। यहां कबूतरोंको अन्न चुगाया जाता है।

दर्शन समाप्त कर अपने स्थानको लौट जाना चाहिये। और प्रसाद पा, दूसरे दिनके लिये भी कुछ साथ ले लेना चाहिये। जो लोग रास्तेकी चली पूड़ियां खाते हैं, उन्हें रातको पूड़ी-प्रसाद बनाकर बांध लेना चाहिये। जो नहीं खाते, उन्हें कोई दूसरी व्यवस्था अपने भोजनकी कर लेनी चाहिये। दूसरे दिन गिर्नारकी चढ़ाई करनी पड़ती है।

दूसरे दिन गिर्नारके मध्यमें गोमुखी गंगापर प्रसाद पा लेना चाहिये। जो लोग खानेको साथ नहीं ले जाते उन्हें वहां कष्ट मिलता है। क्योंकि खानेकी कोई चीज वहां नहीं मिलती। घोड़े-गाड़ियोंमें सूर्योदयसे पहले ही गिर्नारके पदस्थलपर पहुंच जाना चाहिये। पर्वतपर चढ़ाई करते ही करते सूर्योदय होता है। एका-एक पर्वतमालापर सूर्यकी सुनहरी किरणें सोनेका छत्र रख देती हैं—उस समय वहांकी बाहरी प्रकृति विचित्र शोभा धारण करती है,—जिसके साथ यात्रियोंकी भीतरी प्रकृति भी हरीभरी

और उल्लसित हो उठती है। जिन सीढ़ियोंसे यात्रियोंको पहाड़की चढ़ाई तै करनी पड़ती है, वे सीढ़ियां क्या, मानों स्वर्गतक पहुंचानेके सोपान हैं। सीढ़ियां इतनी बड़ी हैं कि एक साथ ६ आदमी ऊपर मजेमें चढ़ सकते हैं। जब यात्री लोग थक जाते हैं तब एक जगह जरा देर विश्राम भी कर लेते हैं। ज्यादा देरतक विश्राम कोई इसलिये नहीं करता कि धूप चढ़ आनेपर उन्हें चढ़ाईमें कष्ट अधिक होनेका भय रहता है। क्या आप जानते हैं कि इन सीढ़ियों (पैड़ियों) की संख्या कितनी है ? हजार-दो हजार नहीं, पूरे दस हजारकी संख्या है। इनको पार कर गुरु श्रीदत्तात्रयके चरणोंके दर्शन होते हैं। इनमें कहीं कहीं साधु-महात्माओंके स्थान भी मिलते हैं। जनभायोंके मन्दिरका रास्ता और गुरु दत्तात्रयका मार्ग यहींसे कटकर गया है, जहांपर सोरठ महल बने हुए हैं। इन महलोंको देखनेकी यात्रियोंको बड़ी इच्छा होती है, परन्तु महल हमेशा बन्द रहते हैं। बिना इन्तजामके पड़े रहनेके कारण अब इनमें चमगादड़ोंका अड्डा जमा रहता है। सब सम्प्रदायोंके यात्री इन्हें देखनेको उत्सुक रहते हैं, परन्तु बन्द रहनेसे किसीका वश नहीं चलता। इन मकानोंके सम्बन्धमें यह कहावत मशहूर है कि अब भी यहां रातको पासों और चौपड़की आवाज आती है। कुछ भी हो, इमारतोंमें जो सन्नाटा भरा रहता है, उससे प्राचीनताकी जो रेखा चित्तपर अंकित होकर दीर्घकालतक स्थायी बनी रहती है, वह बड़ी ही विचित्र और एक अपर्व निस्तब्ध भावको पैदा करनेवाली है।

यहांसे आगे बढ़नेपर दाहिने हाथ जो मार्ग गया है, वह जैनियोंके मन्दिरोंका है और बाईं ओर गोमुखी गंगा कुछ ही दूर-पर दिखाई देती है। यहां कुछ प्रसाद रख गुरु श्रीदत्तात्रयके चरणकमलोंका स्मरण करना चाहिये। इस तरह आसानीसे उनके चरणोंतक पहुंच हो जायगी। गोमुखीका मार्ग छोड़कर एक पहाड़से उगे हुए दो पेड़ोंकी शीतल छायामें गोमयसे लीपा हुआ एक चबूतरा है। यह स्थान भैरोंझांप कहलाता है। यह स्थान बड़ा रमणीक मालूम होता है। इसका इतिहास भी करु-णासे ओतप्रोत है। कहते हैं, कितने ही महात्माओंने अपने इष्टदेवको उत्कट दर्शन-लालसासे यहांसे कूदकर अपने नश्वर शरीरका त्याग कर दिया है। यहां अपना सामान रखकर यहां-के रहनेवालोंसे कह देना चाहिये। फिर बजरंगबलीकी चौकी बैठाल गुरु दत्तात्रयके चरणोंकी ओर बढ़ना चाहिये। यात्री जब गोमुखी गंगासे चलता है तब थोड़ी दूरपर एक पहाड़के ऊपर बहुतसे लंगूर फल-फूल-पत्ते खाते हुए देख पड़ते हैं। इन्हें छेड़ना उचित नहीं।

इसके बाद यात्रियोंको श्रीगोरखनाथका पहाड़ मिलता है। यह पहाड़ गोमुखी गंगासे बहुत ऊंचा है। इसमें एक छोटीसी गुफा बनी हुई है। इसके पास एक धूनीमें भस्म पड़ी हुई है। चिमटा धूनीमें गड़ा हुआ है। कहा जाता है कि इस जगह श्रीगोरखनाथजी भजन करते थे। इसके आगे पहाड़की दो चट्टानें आपसमें मिली हुई हैं। इनके भीतरसे यात्रियोंको निकलना

पड़ता है । इसको मोक्षयोनि कहते हैं । मोटे आदमियोंको यहां मोक्षप्राप्तिका दुस्साहस न कर बैठना चाहिये । यहांसे कुछ दूर-तक सीधा रास्ता मिलता है । यहांका पार्वत्य दृश्य क्या विचित्र है कि जान पड़ता है, जमीन और आसमानके बीचमें विधाताने यह एक दूसरी ही अद्भुत सृष्टि की है। सहसलोचन भी इस दृश्यको देखकर तृप्त न होंगे । चलते समय जान पड़ता था कि दत्तात्रयजीका पहाड़ अब करीब आ गया। लेकिन यहां आते ही वह खयाल गायब हो जाता है। यहांसे उतरकर फिर एक दूसरे पहाड़की चढ़ाई करनी पड़ती है । देखकर हिम्मत पस्त हो, जाती है। लेकिन धैर्यके साथ श्रीगुरु दत्तात्रयका ध्यान कर यात्रि-योंको धीरे धीरे यह मार्ग भी तै कर लेना चाहिये । उनकी कृपा-से यात्रियोंको कोई कष्ट न होगा । बल्कि आधे घण्टेमें वे रास्ता पार कर डालेंगे । चलते समय यहां बारंबार दत्तात्रयके नामपर यात्रियोंकी गगनभेदिनी जयध्वनि पर्वतोंमें प्रतिध्वनित हो हिन्दू-धर्मकी महाशंखध्वनिकी तरह सुनाई देती है । हृदय भावावेशमें मस्त हो जाता है। इन सजीव प्राकृतिक छटाओंको छोड़कर लोग सिनेमा देखकर जो बहलाया करते हैं । परन्तु उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि निर्जीव कृत्रिमता कभी सुकोमल सजीवताका मुकाबला नहीं कर सकती । यहां साम्यवाद भी कितना मनोहर है कि राजा और रंक एक ही मार्गके पथिक हैं, कोई किसीसे विरोध नहीं करता, एक दूसरेके परम मित्र हैं, अमीर और गरीब सब एक मार्ग तै करते हैं। यहां चढ़ाई सीधी है। बालक,

वृद्ध, जवान, स्त्री-पुरुष, सबको यहां सीधी चढ़ाई करनी पड़ती है। इस पहाड़में १०० सीढ़ियां हैं। ये नई नहीं, पुराने जमानेकी बनी हुई हैं; परन्तु कष्टप्रद नहीं हैं। भयकी बात न रहनेपर भी किसी किसीको धैर्य भी नहीं रहता। क्योंकि दाहिनी ओर नज़र गई तो सीधे पातालका रास्ता दिखलाई पड़ता है। यात्री लोग भगवानका नाम लेते हुए आनन्दसे पैंड़ियां पार करते चले जाते हैं। ऊपर पहुंचते ही सारा कष्ट आनन्दका स्वरूप बन-जाता है। गुरु दत्तात्रयके नेत्रसुखद पवित्र पाठपीठोंके दर्शन कर यात्री जीवनको सफल मानते हैं। चरण–चिह्नोंपर एक छोटीसी छत्री बनी हुई हैं इसके पास गोसाईं लोग बैठे हुए भेंट पाते हैं। दर्शन कर परिक्रमा करनी चाहिये। परिक्रमामें एक घण्टा बंधा हुआ है। इसे बजा देना चाहिये ताकि यात्रियोंके पहुंचनेकी खबर गुरुके कानोंतक हो जाय। थोड़ी देरतक छत्रीके पास खड़े हो चारों ओर निगाह दौड़ाइये। विराट प्रकृति-की शक्ति-शोभा देखते ही बनती है। हृदयमें जो अपार आनन्दकी धारा उमड़ चलती है उसका अनुभव वहीं होता है। घर बैठे, कल्पनाके सहारे, उसका लेशमात्र भी अनुभव नहीं हो सकता। पूर्वकी ओर देखिये तो पहाड़से सटा हुआ एक दूसरा पहाड़ देख पड़ता है। यह अघोरियोंका पहाड़ है। इसपर जाना कठिन है। उत्तरकी ओर देखिये, हरे-भरे प्रफुल्ल बनोंका समुद्रसा दिख-लाई पड़ता है—दूर—बहुत दूरतक—जहांतक दृष्टिकी पहुंच हो। वन दो हैं, एकको लाखा और दूसरेको शेशा वन कहते हैं। इन

वनोंसे होकर भी आनेका मार्ग है। इस मार्गसे देहाती लोग आते हैं। यात्रियोंको पैंड़ियोंसे होकर आना-जाना पड़ता है। पच्छिमकी ओर पर्वतपर खुदी हुई पैंड़ियोंकी शोभाका निरीक्षण कीजिये। दक्षिणकी ओर तरंगाकार पर्वतमाला, पृथ्वीके वैराग्य-विजय वक्षःस्थलपर पड़ी हुई कैसी सुन्दर भावनामय हो रही है। अनादि मानों इस अपराजित शोभाके सौदर्न्यपर पराजय स्वीकार करके उसके प्रेमोपहार मालाके लिये विनयपूर्वक प्रार्थना कर रहा है।

यहांपर एक कमण्डल-तीर्थ है। यहां गुरु दत्तात्रय स्नान करते थे। इसी तीर्थको जाना हो तो जहांपर डोलियां आकर ठहरती हैं, उन्हींके पाससे बांई ओरको जो सीढ़ियां गई हुई हैं, उन्हींके मार्गसे होकर जाना पड़ता है।

इस तरह दर्शन कर आहिस्तेसे उतर आना चाहिये। इन भयावनी सीढ़ियोंसे हजारों वर्षसे लगातार करोड़ों मनुष्य चढ़-उतर चुके, पर किसीकी मृत्यु हुई ऐसा नहीं सुन पड़ता। वहीं एक बड़ी जबरदस्त शिला लटक रही है। नीचे उतरकर देखिये तो होश उड़ जाते हैं। लेकिन इसी तरह अज्ञात अतीत कालसे यह लटक रही है।

फिर गोमुखी गंगापर पहुंच प्रसाद पाइये। ऐसा प्रसादका स्वाद आपको कभी न मिला होगा। अमृतजल पीकर जीकी शान्ति दूनी कर लीजिये। तीर्थकी महत्ता और गौरवका अनुमान तो जगह-जगहपर खास-खास ढंगसे आपको होगा, परन्तु

यहांकी एकान्त शान्त साधनाका भाव कुछ विचित्रता जरूर ला देगा। सब तीर्थांके लिये यह खास बात है। यहां कुछ देर आराम कर फिर कमर कसनी चाहिये। चढ़ते समय यात्रियोंको देर होती है, जोर पड़ता है; परन्तु उतरते समय वे बहुत शीघ्र रास्ता पार कर लेते हैं। यहां देखने लायक एक स्थान और है। यह मुचकुन्द-गुफा है। जो लोग जाना चाहें, वे इसे भी देख लें। गिरनारकी दृश्यावली एक बार जिनके हृदयमें अंकित हो गई है, फिर जिन्दगीभर उसकी छाप नहीं मिट सकती। वह सौन्दर्य, वह सत्यं-शिवं-सुन्दरम्‌की ज्योति सदा अन्तरात्माकी अन्धकार-गुफाको ज्योतिर्मय बनाये रहती है।

यहांसे सीधे डेरे पहुंच आराम करना चाहिये। उस दिन यात्रियोंको गुड़का मोहनभोग खाना चाहिये, क्योंकि इससे थकावट दूर होगी। जिन्हें गुड़ हजम न हो, वे चीनीका बनायें; पर हृष्टपुष्ट मनुष्योंको गुड़का बना मोहनभोग ज्यादा फायदे-वर होगा। रातको नींद ऐसी लगेगी कि मालूम होगा, जीवनमें इस तरहकी नींद कभी नहीं लगी।

इस धर्मशालाके पास एक किला है, इसे जूनागढ़का किला कहते हैं। इसमें जानेके लिये मुफ्तमें पास मिलता है। यह किला पांच हजार वर्षका बना हुआ बहुत पुराना है। इस समयके लोग इसे तीन ही हजार वर्षका बना बतलाते हैं। यह किला अनेक खण्डोंमें, अलग अलग,है। लेकिन इसकी बनावट बड़ी विचित्र है। भीतर एक तोप पड़ी है। यह १२ हाथ लम्बी है। मुख १ फुट

चौड़ा है। मुखके ऊपर अरबी भाषामें एक लेख लिखा हुआ है। यह किला राव खंगारके हाथोंसे मुसलमानोंके अधिकारमें गया था। उसके महल इस समय खंड़हरके रूपमें जीर्ण हो रहे हैं। खंभे पड़े हुए हैं। इन्हींमें मंडप बांधकर राव खंगारने विवाह किया था। इससे और भी बहुतसे पुराने दृश्य देख पड़ते हैं। एक जगह सरोवर है। इसीसे ग्राममें नलोंद्वारा पानी पहुंचाया जाता है। इस सरोवरमें पानी पर्वतसे आता है।

यहांसे प्रभास-तीर्थकी तैयारी करनी चाहिये। स्टेशनपर पहुंचकर वीरंग्रामका टिकट लेना चाहिये। वीरंग्राममें शहर-पनाह देखिये। यह भी एक अद्भुत दृश्य है। इस विशाल ग्राममें मुसलमानोंहीकी बस्ती अधिक है। इसी स्टेशनसे प्रभासको ट्राम जाती है। अकेला हो तो ट्रामसे जाना अच्छा है, और अगर कोई साथ हो तो घोड़ेगाड़ीसे। प्रभासके पूर्वद्वारपर समुद्रके किनारे एक भाटियेकी धर्मशाला है। यह बड़ी सुन्दर, भव्य इमारत है। इसीमें ठहरना अच्छा होगा। गाड़ीमें बैठ प्रभासको चलते समय कब्रस्तान ही कब्रस्तान दिखलाई देते हैं। यहां वीरताका एक सुन्दर अनुभव होता है। यहांके निवासी वीर थे। उन्हें क्षणभर-के लिये पराधीन रहना स्वीकार न था। वे मुसलमानोंपर बराबर आक्रमण करते गये, जिसका फल यह प्रत्यक्ष होता है कि यहां कब्रस्तानोंकी असंख्य संख्या हो गई। ये उन्हीं मुसलमानोंके मकबरे हैं जो लड़ाईमें मरे थे।

जब नगरका द्वार आयगा, तब यह एक मामूली मौजासा

मालूम होगा। इसके मकान बहुत पुराने मालूम होते हैं। पूर्वद्वार-की धर्मशालामें ठहर और शौच आदिसे निवृत्त हो, स्नान करके, यहांके प्रधान देवता ज्योतिर्लिङ्ग सोमेश्वर (सोमनाथ) महादेवके दर्शनोंके लिये चलना चाहिये। यह ज्योतिर्लिङ्ग आदिलिंग माना गया है। मन्दिरके भीतर जाइये तो इसकी प्राचीनता प्रकट हो जायगी। भीतर देखियेगा कि एक शिव विराजमान हैं। इस मूर्तिके नीचे एक गुफा-सी है। सीढ़ियोंसे होकर नीचे उतरना पड़ता है। भीतर रोशनोमें एक अद्‌भुत गोलाकार तेजोमय शिवलिङ्गके दर्शन होते हैं। यह सौराष्ट्रपति सोमनाथ हैं। स्पर्श करके दर्शन करनेका अधिकार साधारण द्विजातिमात्रको है। गजनीका बादशाह, महमूद, यहींसे अरबों धन ले गया था। यहां शिवजीकी विभूति, सौन्दर्य और तेज देखकर सम्पूर्ण दुःख-राशि दूर हो जाती है।

प्रभासमें धर्मशालासे पूर्व आधे या पौन मीलकी दूरीपर एक बहुत उत्तम स्थान है। यहां पांच नदियां आकर मिलतो हैं। इनके नाम यह हैं—१ हिरण्या, २ वजनी, ३ इलंकु, ४ कपिला, ५ सरस्वतो। ये पांचों नदियां समुद्रकी एक खाड़ीमें आकर मिलती हैं। इन नदियोंका बहुत बड़ा माहात्म्य है।

सोमनाथजीके दर्शन कर, प्रसाद पा, विराम करना चाहिये। ४ बजनेपर घोड़ागाड़ीपर सवार हो प्रत्यक्ष सरस्वतीके दर्शनोंकी तैयारी करना उचित है। सरस्वतीके तटपर खड़े होकर देखिये, ये मन्द गतिसे बह रही हैं। यहां भी निस्तब्धता छाई रहती है। शांति तो आपको पहुंचते ही प्राप्त होगी; और इससे आप यहांका मौन

प्रभाव प्रत्यक्ष करेंगे। चारों ओर सुहावने पेड़ोंकी पांति खड़ी हुई है। सरस्वतीके साथ बहुत पुरानी एक ऐसी स्मृति जड़ी हुई है जो हिन्दुओंके मस्तिष्कमें चिरकालतक अमर रहेगी। इतिहासवेत्ता भी इसे नहीं भूल सकते। यहीं यादवोंका निधन हुआ था! यादवोंका फूला-फला बाग एक ही दिनमें उजड़कर न जाने क्या हो गया! धन्य है विधाताकी सृष्टि और धन्य हैं उसके विधान। वह भालाकार खड़े हुए ऐरे जिनसे यादवोंका ध्वंस हुआ, अब भी सरस्वतीके तटपर मौजूद हैं।

यहां लगूंर भी हैं; परन्तु इन्हें छेड़ना उचित नहीं। अगर हो सके तो कुछ चने आदि इन्हें चबवा देना चाहिये, अन्यथा मौन धारण किये रहना ही ठीक होगा। यहां एक ही लंगूरके मादा असंख्य हैं। यह एक विचित्र दृश्य है। कभी कभी ऐसा होता है कि जंगलसे कोई लंगूर मोटा-ताजा होकर इससे लड़नेके लिये आता है। जब दोनोंमें भयानक मल्लयुद्ध छिड़ जाता है, तब उसकी स्त्रियां (मादालंगूर) सिकुड़कर चुपचाप बैठी हुई दोनोंका महायुद्ध देखती रहती हैं। वे किसीका पक्ष नहीं लेतीं। दोनोंकी देहसे खूनकी धारा बह चलती है, पर तो भी कोई मैदान छोड़कर नहीं भागता। अन्तमें जिसे विजय मिलती है, उसे ही वे सब मादा-लंगूर अपना पति स्वीकार करती हैं। हिन्दुओंकी स्त्रियों और बच्चोंको ले भागनेवाले मुसल्मानोंको इससे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। परन्तु उन्हें वीरता और दृढ़ताकी क्या परवा? चोरी करना ही उनके लिये परम धर्ममें

दाखिल है, जो काम एक पशु भी नहीं करता। हिन्दुओंको तो हर तरहसे अपनी प्राणोंसे प्यारी पत्नियोंकी रक्षाके लिये बली, वीर और साहसी होना चाहिये।

यहां सरस्वतीके दर्शन समाप्त कर सायंकालके समय फिर ज्योतिर्लिङ्ग-भगवान श्रीसोमनाथजीके दर्शनोंकी तैयारी करना चाहिये। वेद मन्त्रोच्चार करते हुए कुछ कालतक बैठकर ध्यान कीजिये। हृदयमें आनन्दकी निर्मल धारा बह चलेगी। रोमांच होगा और जाग्रत मूर्तिका प्रभाव प्रत्यक्ष हो जायगा। शामके व्रक्त सोमेश्वरमें शांति रहती है। रातको भी बड़ा सन्नाटा रहता है। रात्रिके दर्शन समाप्त कर अपने डेरेपर पहुंच विश्राम करना चाहिये।

तीसरे दिन, सुबहको उठकर समुद्र-देवके दर्शन कीजिये। धर्मशालाके पीछे ही इनकी घोर गर्जना हो रही है। अगर कोई नहानेकी इच्छा करे तो उसे हलकी तरंगोंमें स्नान करना चाहिये। प्रातःकालका दर्शन समाप्त कर प्रसाद पा कुछ विश्राम करनेके बाद तांगा मंगवाकर भाड़ा तै कर लेना चाहिये कि हम लोग ऋण-मुक्तेश्वर उतरेंगे। यहीं श्रीभगवानने नश्वर मनुष्य-लीला समाप्त की थी। यहां दर्शन करके फिर गाड़ीके वक्तपर स्टेशन वापस आ जाना चाहिये। यात्रियोंको चाहिये कि तांगे-वालेसे पहले ही यह करार कर लें कि वह स्थान दिखलाकर वक्तपर स्टेशनपर पहुंचा देगा। इसके बाद निश्चिन्त होकर तांगे-पर ग्रामके भीतरसे होकर जाना पड़ता है। यह ग्राम छोटा-सा है।

इससे निकलनेपर फिर कब्रस्तान और समरक्षेत्र आ जाते हैं। इन्हें पार करके ऋणमुक्तेश्वर जाना पड़ता है। कुछ देर बाद वह स्थान भी आ जाता है। यहां उतरकर दर्शन कीजिये। ऋण-मुक्तेश्वरका माहात्म्य है कि ये ऋणसे मुक्त कर देते हैं। दर्शन भी बड़े विलक्षण होते हैं। जी भर जाता है। जब दर्शक मन्दिरके बाहर आकर खड़े होते हैं तब देखते हैं कि बाईं ओर रत्नाकर सागरकी उत्ताल तरंगें उठ रही हैं। तटपर बाणेश्वर महादेव हैं। इसी जगहसे भीलने भगवान श्रीकृष्णचन्द्रके नेत्रोंको मृग-नेत्र समझकर तीर मारा था। अहा! वह कितनी करुणाका दृश्य था। भारतके भाग्य-सूर्य धीरे धीरे अस्ताचलकी ओर धंस रहे थे। जिनकी लीलामें अपार प्रेम, अजेय शौर्य, अखण्ड ज्ञान, अप्रतिहत संगठन-शक्ति थी; जो भारतके पूर्ण अवतार, अपने समयके एकमात्र सर्वमान्य नेता थे; यहां उन्हींकी लीलाका अन्तिम पटाक्षेप हुआ है! कितना भावव्यंजक और कितना करुणाजनक यह स्थान है!

महादेवके मन्दिरसे पांच सौ कदम आगे कुछ वृक्षसे देख पड़ते हैं। यही भगवान श्रीकृष्णचन्द्रको लीलावसानभूमि है। हृदय थामकर यात्री इसकी ओर बढ़ते हैं। यहां छोटासा एक पक्का सरोवर है। इसके पास एक पीपलका पेड़ खड़ा है। यहां पहुंचते ही अतीत स्मृति यात्रियोंके हृदयको बहुत ही शान्त कर देती है। छातीकी धड़कन भी मानों खूब संभल संभलकर चलने लगती है कि कहीं कोई शोरगुल न हो—मौनमें कोई बाधा न आये।

भीलके शराघातसे धराशायी भगवान श्रीकृष्णचन्द्र इसी पीपलके नीचे लेटे हुए थे। याद कीजिये, मृगको मरा जान भील दौड़कर वहां आया और भगवानके दर्शन कर बहुत ही दुःखित भावसे कहने लगा—"भगवन्! क्षमा कीजिये, मैं आपका शरणागत हूं। मेरी रक्षा कीजिये। मेरे अपराधकी थाह नहीं है।" रुधिराक्त वाण भगवानके अरुण कोमल चरणोंसे लटक रहा है। अहा! वह कितनी करुणाकी घड़ी थी! भीलकी बातें सुनकर श्रीभगवानने कहा—"तुम चिन्ता न करो। बड़ा अच्छा हुआ जो बदला आज चुक गया। मैंने भी तुम्हें वाण मारा था, जब तुम बालिरूपमें थे। व्याधको भगवानकी बातोंसे ज्ञान हो गया। इस पुण्य-भूमिकी रज लेकर बार बार मस्तकपर धारण करना चाहिये।

द्वारका-धाम

वाणेश्वर महादेवसे होकर स्टेशन पहुंच द्वारका-धामका टिकट खरीदना चाहिये। शीघ्र ही गाड़ी द्वारका-धाम पहुंचा देगी। यह पुरी श्रीकृष्णचन्द्र भगवान सच्चिदानन्दकी है, जिसकी महिमा पुराणोंमें अमर है। इन्हीं भगवानका यहांके लोग रण-छोड़ टीकं, श्रीजी, बांकेविहारी, सांवल सेठ, माखनचोर, आदि विशेषण दे देकर जय जय बोलते रहते हैं। भक्तगण कुछ दिन वहां रहें तो उन्हें यह

जान पड़ता है कि हम द्वारकाधीशकी भूमिके निवासी हैं, वही हमारे महाराज हैं। यहां श्रीजीका वैभव इतना बढ़ाचढ़ा है कि संसारको चकित करनेवाला है। यह व्यर्थकी प्रशंसा नहीं है। श्रीजीके मन्दिर-शिखरपर जो ध्वजा उड़ रही है, वह कोई मामूली पताका नहीं। ५०।६० गज कपड़े इसके बनानेमें दर्जीके सिपुर्द किये जाते हैं। क्या आपने कभी ६० गज कपड़ेकी कोई ध्वजा देखी है? सुनी भी न होगी। समुद्रके किनारे गोमतीतटपर यह आकाश चूमती हुई हवाके मन्द-मन्द झोंकोंमें झूमती रहती है। मन्दिर देखकर तो आनन्दका फव्वारा फूट निकलता है। उच्छ्वासका वेग किसी तरह फिर रुकता ही नहीं। उसी समय दर्शकोंको विदित होता है कि श्रीकृष्णचन्द्रका कितना प्यार उनके हृदयमें अज्ञात भावसे छिपा हुआ था। यहां सब कुछ अच्छा है; सिर्फ एक बात खटकनेवाली है। यहां कुछ गन्दगी है, जिसे देखकर बड़ा दुःख होता है। यहांकी सफाईपर गांववालों और खास तौरसे राज्याधिकारियोंको विशेषरूपसे ध्यान देना चाहिये।

पहले धाममें ठहरनेकी कोई धर्मशाला नहीं थी। इसका कारण अनुमानतः यह जान पड़ता है कि यहांके जलकष्टके कारण किसीने धर्मशाला नहीं बनवाई। जब तालाबमें पानी रहता है तब भी बड़ी दूरसे पानी लाया जाता है। इस समय श्रीजीकी कृपासे एक धर्मशाला तो स्टेशनपर यात्रियोंकी सेवाके लिये तैयार है। इसके बनवानेवाले कलकत्तेके प्रसिद्ध बाबू

हजारीरमलजी दुदवेवाला हैं। इन्होंने इसका निर्माण करा खूब यशकी प्राप्ति की। दूसरी धर्मशाला मन्दिरके पास ही है। इसे स्वर्गीय बाबू बलदेवदासजी दुदवेवालेके सुपुत्र वसन्तलालजी रामेश्वरलालजीने बनवाकर यात्रियोंके सेवाभागका पुण्य कमाया है। यात्रियोंकी जहां इच्छा हो, वहीं ठहर सकते हैं बार बार दर्शनोंकी इच्छा रखनेवालेको चाहिये कि भीतर ही उतरें।

यात्रियोंको चाहिये कि एक बार बँधी कमरकी हालतमें दर्शन करें; अगर उन्हें पट खुले हुए मिल जायं। अगर पट बन्द हों तो स्नान करके फिर दर्शन करें। मन्दिरके दो द्वार प्रधान हैं, एक तो गोमतीके तटवाला और दूसरा ग्रामकी तरफवाला। मन्दिर-द्वारपर प्रवेश करते ही दाहिने और बायें ओर प्रभुके दर्शन होते हैं। इसके आगे श्रीजीका सभा-मन्दिर मिलता है। चौकमें दर्शनाभिलाषी बैठे रहते हैं। पट खुलते ही यात्रियोंकी जयजय-ध्वनिसे आसमान गूंज उठता है और दर्शन करते समयके आनन्दका कहना ही क्या है? खड़े देखते ही रहिये, पर चित्तकी चाह पूरी नहीं होती, उत्तरोत्तर आकांक्षा बढ़ती ही जाती है। प्रभुकी चारों भुजाओंमें शंख, चक्र, गदा, पद्म शोभायमान हैं। मस्तकपर मुकुट, कानोंमें कुण्डल, गलेमें तुलसी और बहुमूल्य माला, गुलाबी और पीली पोशाकमें सफेद किनारीदार धोती, चरणोंमें पायल, अनिन्द्य सुन्दररूपकी शोभाकी और ही छटा कर देते हैं। जब कभी वंशी धारण करते हैं, तब तो सरलतापर
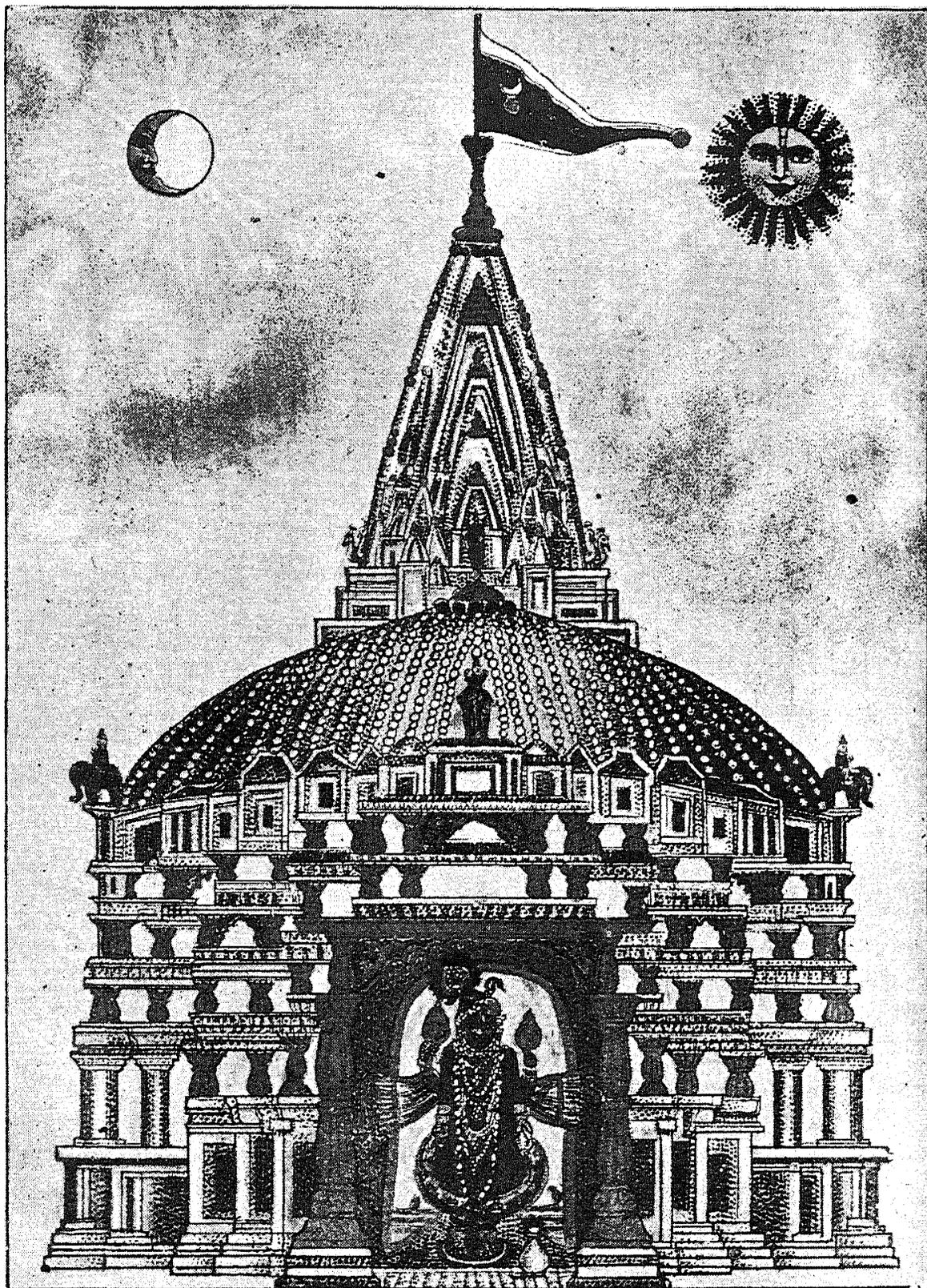
श्रीदुवारका धाम।

सर्वस्व निछावर कर देनेको जी चाहता है। आरती उतारनेके समय कैसा अद्भुत तेज चेहरेसे बरसता रहता है कि वाह देखते जाइये, पर आंखे पलक मारनेकी इजाजत न देंगी। नये यात्रीका तो जीवन ही सफल हो जाता है। उसके मनसे मार्गश्रम जन्य कुल कष्ट दूर हो जाते हैं। प्रत्युत उसका मुखमण्डल भी श्रीजीके अखण्ड तेजका छोटासा एक बिम्ब बनकर हर्ष और तेजोमय हो जाता है। थोड़ी देरमें सेवकगण दर्शकोंको पुष्प आदि अर्घ्य लेकर देते हैं, इससे मालूम हो जाता है कि अब पट बन्द होनेवाले हैं। यहांसे चलकर यात्री लोग चौकमें आते हैं। यहां छोटे छोटे मन्दिरोंमें श्रीजीका परिवार विराजमान है। उनकी नामावली दक्षिण द्वारसे लेकर उत्तर द्वारतक इस प्रकार है :—कुण्डेश्वर महादेव, केशव भगवान, प्रद्युम्नजी, अंबिका देवी, पुरुषोत्तम भगवान, गुरु दत्तात्रयजी, प्रभुके सामने देवकी माता, बलदाऊजी, राधाकृष्ण, वेणीमाधव, शारदामठके शंकराचार्य महाराजकी गद्दी और पादुकाएं।

यहांसे लक्ष्मी-भाण्डारकी ओर चलिये। जो कुछ विभूति देख पड़ती है, वह सब इन पटरानीजीकी ही कृपासे है,सब इन्हीं-का प्रताप है। श्रीजीको तो पता ही नहीं कि लक्ष्मीभाण्डारमें क्या है। उन्हें बस माखन-मिश्री, दूध-दही, पेड़ा-मिठाई और अनेक प्रकारके भागोंसे मतलब ; ज्यादा हिसाब-निकास वे क्यों रखने लगे ?

भगवानकी पटरानियां हैं, लक्ष्मीजी, सत्यभामाजी, राधि-

काजी और जामवन्तीजी। पटरानियोंके मन्दिर एक दूसरेकी बराबरीमें हैं। यहीं स्वामी शंकराचार्यकी गद्दी भी है। यहांसे चलकर दुर्वाशा ऋषिके दर्शन करने चाहिये। इनका मन्दिर छोटा-सा है। इन्हें बड़े भक्तिभावसे प्रणाम करना चाहिये। ये वही दुर्वाशा ऋषि हैं जिन्हें, राजे-महाराजे, ऋषि-मुनि, सब कोई डरते थे। इन्होंने रथ जोतकर, भगवानकी पटरानियों सहित रथपर जा बैठे थे। जब साक्षात् भगवान ही इनसे इतना घबराते थे तब हम लोगोंका कहना ही क्या है, हमें तो इनका अत्यधिक सम्मान करना उचित है। इनके सामने ही दक्षिणद्वार है। यहांसे ७० सीढ़ियां नीचे उतरते ही गोमती-गंगा मिलती हैं। अहातेमें कितने ही और भी मन्दिर हैं। भक्तिपूर्वक सबके दर्शन और प्रणाम करके वापस आना चाहिये।

दूसरे दिन गोमतीपर पहुंचकर एक छाप लेनी पड़ती है। इसका कर १⁄-) चुका देनेपर स्नान करनेकी आज्ञा मिलती है। एक बार कर देकर फिर चाहे रोज स्नान किया करे। गोमतीमें पिण्डदान कर रणछोड़जीके मन्दिरमें सामग्री सहित जाना चाहिये। कर चुका हर एक यात्री चाहे तो द्वारकाधीशकी पूजा अपने हाथों कर सकता है। परन्तु अकसर यहां समृद्धिशाली मनुष्य ही पूजन करते देखे जाते हैं। यहांसे फिर सभामन्दिरकी ओर चलना चाहिये। यात्रियोंके पहुंचनेपर मन्दिरमें परदा डाल दिया जाता है। फिर भगवानके सब वस्त्र उतारकर निर्वाण दर्शन कराये जाते है। इस समय देखिये, प्रभुकी निराभरण देह

कितनी मनोहर जान पड़ती है, और वक्षःस्थलके भृगुलता-चिन्ह-की बात ही क्या, वहांसे मानों सौन्दर्य, भाव और इतिहासका मौलिक साक्षात सत्य प्रतिक्षण निकलता रहता है। दुग्ध, दधि, घृत, मधु, शर्करा और जलसे बराबर मलकर प्रेम सहित स्नान करावे, इसके बाद वस्त्र धारण करा चन्दन, गन्ध-पुष्प आदिसे चर्चित करे। इसके अनन्तर आरती करे। यह पूजन-विधि सर्वांग सम्पूर्ण हो जानेपर परदा हट जाता है। बाहर खड़े यात्रियोंकी जय जय-ध्वनि बारम्बार एक साथ उठ उठकर जमीन और आस-मानके पर्दे एकमें मिला देती है। जिन्होंने अपने हाथों श्रीप्रभुकी विधिपूर्वक पूजा करके अन्तमें यह सहस्र कण्ठकी हर्षध्वनि सुनी है, उनका जीवन सार्थक है, इस समयके आनन्दका रसास्वाद उन्हें ही मिलता है।

तीसरे दिन गोमतीमें स्नान कर, प्रभुदर्शनके बाद, फिर गोमती-तटपर आ, यहींसे द्वारकाधामकी परिक्रमा करनी चाहिये। परिक्रमामें कई तीर्थ मिलते हैं। भूरीय बावेका मन्दिर, फिर प्रभु जिस कूपमें पैदा हुए वह कूप मिलता है, फिर वह स्थान भी मिलता है जहां प्रभुने नरसीकी हुंडी स्वीकार की थी। फिर नृगकुंड; (राजा नृग गिरगिट होकर इसी कुंडमें पड़े थे) फिर रिण मुक्तेश्वर आदिके दर्शनोंके पश्चात् परिक्रमा समाप्त हो जाती है।

———

ध्वजा

श्रीप्रभुके मन्दिर-शिखरपर जो ध्वजा फहरा रही है और दूरसे छोटीसी मालूम देती है, इसकी बात सुनकर बड़ा आश्चर्य होता है। इसमें पूरा ६० गज कपड़ा लगता है। जो भक्त ध्वजा चढ़ानेकी इच्छा रखता है, उसे २००० ब्राह्मण-भोजनका भी संकल्प साथ ही करना चाहिये। ध्वजा चढ़ानेका वही अधिकारी है। जिस दिन कोई ध्वजा चढ़ाता है, उस दिन शहरभरमें उसकी कीर्ति फैल जाती है और बड़ी चहलपहल दिखाई देने लगती है। चार बजे लोगोंकी अपार भीड़ लग जाती है। ध्वजाकी एक बड़ी गांठ बांधकर एक मनुष्य रस्सेसे ऊपरको चढ़ाता है। वह दृश्य देखने ही लायक होता है कि प्राणोंकी जरा भी परवा न कर एक आदमी पहली ध्वजाको खोलनेके लिये ऊपर चढ़ जाता है, और बड़ी कठिनतासे ऊपरकी ध्वजा खोल, उसे बांधकर आसानीसे नीचे उतारता है। फिर नई ध्वजाकी गांठ दण्डसे बांधकर, उपरसे एक नारियल ध्वजाकी पूजामें अर्पण कर ऊपरसे नीचेकी ओर पटक देता है। नारियल नीचे आते ही उसे लूटनेके लिये लोग दौड़ पड़ते हैं। नारियल नीचे गिरकर चकनाचूर हो जाता है। परन्तु यहांके लोग चोटकी कुछ भी परवा न कर एक एक चूर लूट लेते हैं। फिर ध्वजा पटकनेको छोड़ते ही जयध्वनिसे आकाश गूंज उठता है। उधर ब्रह्मभोज होना भी शुरू हो जाता है।

यह ब्रह्मपुरी-स्थान मन्दिरसे कुछ ही दूरपर है। इसमें हजारों ब्राह्मण एक साथ बैठकर भोजन करते हैं। भोजनके लिये एक बड़ा ही सुस्वादु मोदक बनता है ; दाल, शाक, पूरी-प्रसाद तो दिया ही जाता है। यह मोदक या लड्डू विविध प्रकारसे बनता है। एक बार प्रभुने मुझपर अन्नकोटके समय दर्शन देनेकी कृपा की थी। अन्नकोटको देखकर बड़ा आनन्द मिला। हृदयकी इच्छा पूरी हो गई। यहांका अन्नकोट दूसरी जगहोंके अन्नकोटसे बहुत ही बढ़ा-चढ़ा और राजसी है। अनेक प्रकारके मिष्टान्न, घीका पकवान, पूरी-बड़े और सागोंकी संख्या तो कुछ गिनी नहीं जा सकती। देवकी माताके सामने चूरमेंका एक चबूतरा बनाया जाता है। यात्री लोग अन्नकोट देखकर इतना ललचाते हैं कि प्रसाद पानेके लिये अधीर हो उठते हैं। भगवानके मिष्टान्न-भोग पदार्थोंमें मोरीस चीनी मिलाई जाती है। यह बड़े खेदकी बात है। न तो जगदीशमें इसका प्रचार है, न रामेश्वरमें; उत्तराखण्डमें तो हरिद्वारतक भी इसकी पैठ नहीं हो पाई। लेकिन यहां यह अनुचित हो रहा है। यहां देशी चीनी तो कहीं देखनेको भी नहीं मिलती। अगर वहांके व्यापारी विशेष ध्यान दें तो इसका सुधार बहुत अंशोंमें हो सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि देशी शकरके प्रचारसे भगवानको और प्रसन्नता होगी।

द्वारकाधामके दृश्योंमें प्रशान्ति है। चारों ओरसे शहरपनाह है। चार द्वारों-सहित बड़ा ही मनोहर शहर है। श्रीजीका मन्दिर, नगरके सिरपर समुद्रके किनारे (एक ऊंची पहाड़ीपर) बना

हुआ है। समुद्र-पथसे आते हुए यात्रियों और कप्तानको इसे देखकर कितना धैर्य होता है! सबके हृदयमें दर्शनोंकी लालसा एक दूसरे रत्नाकरकी तरह अगणित हर्षोत्फुल्ल लहरोंसे उमड़ चलती है। ध्वजा मीलोंसे समुद्र-यात्रियोंको आश्वासनसा देती रहती है।

नगरमें एक बहुत अच्छा पुस्तकालय है। यह समयपर खुला करता है।

इस प्रकार तीन दिन द्वारकाधाममें परमानन्द लेते हुए तत्पश्चात् भेट-द्वारकाके लिये रवाना होना चाहिये। पहलेपहल बैलगाड़ियोंमें बैठकर भेंट द्वारकाकी यात्रा की जाती थी। उस समय साफ-सुथरी सड़क और लहलहे पेड़ोंकी कतारका प्राकृतिक आनन्द मिलता था। बाईं ओरके वृक्ष अपने कोमल किसलय-करोंसे प्रातःकालके भगवान भुवनभास्कर प्राचीपुत्रको बारंबार नमस्कार करते हुए देख पड़ते थे—बड़ा अच्छा, बड़ा ही पवित्र जान पड़ता था। फिर सदा ही पश्चिमकी ओरसे समुद्रकी शीतल वायुके झोंकोंसे सबके सब अष्टावक्रकी तरह सिकुड़ जाते थे। सामने एक सरोवरके समीप श्रीरुक्मिणीजीका मन्दिर है।

यहां उतर यात्रियोंको सबसे बड़ी पटरानी माता रुक्मिणीजीके दर्शन होते हैं। यहांसे इनकी रूठे हुए भावोंसे विराजमान हैं। इनके दर्शनोंसे यात्रा सर्वांग सम्पूर्ण समझी जाती है। कहते हैं, श्रीकृष्णसे रूठकर पटरानीजीने यहां वास किया था।

यहांसे आगे खाड़ी मिलती है। किनारेपर व्याध जैसे आदमी शंखके सूखे हुए कीड़े बेचा करते हैं। इसी खाड़ीसे ये कीड़े निकालते हैं। इन कीड़ोंकी सूखी देह मृगारोगकी अचूक दवा बतलाई जाती है। खाड़ीका दृश्य भी अपने ढंगका निराला है। पानीमें कहीं कहीं समुद्री पहाड़ ऊपरकी ओर मैनाककी तरह सिर उठाये हुए देख पड़ते हैं, पहले लोग खाड़ीसे डोंगियोंपर बैठकर भट द्वारकाकी यात्रा करते थे, परन्तु अब तो धामसे ही सीधे ठिकानेतक आरामसे पहुंच जाते हैं। गाड़ीका प्रबन्ध हो गया है।

भेंट द्वारकामें सत्यभामाजीकी छोटीसी, लेकिन साफ, एक धर्मशाला है। अमीरों और धनीमानियोंके लिये तो और भी सुखप्रद अच्छेसे अच्छे स्थान हैं। पहलेपहल यात्री जब मन्दिरके पास जाता है, तब यहांकी विभूति देखकर उसकी उदासीनता दूर हो जाती है। चारों ओरसे सोने-चांदीकी चमचमाहट नजर आती है, दृष्टि फिसल जाती है और यात्रीको ऐश्वर्यकी महत्तापर मुग्ध हो जाना पड़ता है। मन्दिर क्या है स्वर्गमहल है। बीचमें श्रीजी विराजमान हैं। महारानियोंके मन्दिरोंकी तो बात ही न पूछिये।

श्रीजीके स्थानपर पहुंचते ही यात्रियोंमें आरती-दर्शनोंकी लालसा प्रबल हो जाती है। क्रमशः वे देखते हैं, लक्ष्मीजीका पण्डा स्वच्छ सुन्दर सफेद वस्त्र धारण किये, हाथमें सोनेकी लुटिया लिये, जिसपर साफी ढकी रहती है, श्रीजीके पास पहुंच

खड़ा हो जाता है। और प्रभुको पंखीसे हवा करने लगता है। फिर अनेक उपायोंसे प्रभुका मनोरंजन करता है। दुपट्टेसे प्रभुके साथ अपना भी सिर ढककर कुछ वार्तालाप करता है।

दुपट्टा अलग कर अपना कान प्रभुके मुखके पास लगा, धीरे धीरे सिर हिलाता रहता है जैसे प्रभुकी आज्ञा सुन रहा हो। यह देखकर भोलेभाले यात्रियोंको विश्वास हो जाता है कि दोनोंमें यथार्थ ही वार्तालाप हो रहा है। वे अपने विश्वासपर इतना दृढ़ रहते हैं कि लड़नेके लिये भी तयार हो जाया करते हैं।

कभी कोई सेवक पटरानियोंकी तरफसे कोई सन्देशा लेकर आता है और चुपचाप श्री प्रभुके कानोंमें कहकर चला जाता है।

एक लीला और यात्रियोंको चकित करनेवाली है। वह यह कि श्रीजीकी वही मनोहर मूर्ति महलके ऊपर भी, शीशेके अन्दर देखनेको मिलती है। असाधारण लोग तो क्या, बुद्धिमान भी इसे देखकर चक्करमें पड़ जाते हैं। उन्हें यह सन्देह होता है कि अभी तो नीचे श्रीजीको देखकर हम चले आ रहे हैं, अब यहां वही श्रीजी शीशेके अन्दर कैसे आ गये? कारण यह है कि श्रीजीकी जो मूर्ति नीचे है, उसका बिम्ब एक दूसरे शीशेमें पड़ता है, फिर उससे ऊपरवाले शीशेमें वही बिम्ब पड़ता है,इस तरह कितने बिम्ब बना लिये गये हैं। दूसरे शीशेका बिम्ब लोगोंको दिखाई नहीं देता। जो लोग अन्धभक्ति करनेवाले हैं वे कहते हैं कि प्रभुकी इच्छा, वे हजारोंरूप धारण कर सकते

हैं। कुछ भी हो, यह अन्धश्रद्धा भी प्रभुको प्रसन्न करनेके लिये यथेष्ट है। वे तो बस भावके भूखे रहते हैं।

एक लीला और होती है। इससे खूब मनोरञ्जन होता है। सब पटरानियोंके सेवक, आये हुये श्रीमानोंको घेरकर बैठ जाते हैं और अपनी अपनी महारानीकी बड़े लम्बे लम्बे वाक्योंमें तारीफ करना शुरू कर देते हैं। कोई कहता है कि लक्ष्मीजी श्रीजीको सबसे प्यारी हैं। कोई कहता है, नहीं सत्यभामाजीको वे जितना प्यार करते हैं, उतना और किसीको नहीं करते। तबतक जामवन्तीजीका सेवक बिगड़ खड़ा होता है। वह अपनी महारानीका पक्ष लेकर कहता है कि बस जामवन्तीजीके मुकाबलेमें और कोई नहीं ठहरती, क्योंकि श्रीजी उनके हाथका कच्चा प्रसाद पाते हैं। यह अधिकार और किसी पटरानीको नहीं। इस तरह आनन्द—विनोद होता रहता है।

यहांके वल्लभ-सम्प्रदायके आचार्य गोसाईंजी और उनके पीछे पीछे बहूजी महारानी घूंघट डाले सभामन्दिरमें श्रीजीके पूजनके लिये आती हैं। बहूजी महाराजके सिवा दूसरी स्त्री सभामन्दिरमें नहीं जा सकती। श्रीजीके सामने गोसाईंजी महाराज खड़े होते हैं,उनके पीछे बहूजी महारानी। गोसाईंजी महाराज पूजाकर करके सामग्री देते रहते हैं, बहूजी महारानी औंधी रीतिसे अर्पण करती जाती हैं। आरती शंखोदक आदि अब इसी तरह औंधी रीतिसे अर्पित हुआ करता है। गोसाईंजीके दर्पण दिखानेके पश्चात् बहूजी महारानी श्रीजीको दर्पण दिखाती हैं पर उसी तरह उल्टा। जनता

देखकर अट्टहास करने लगती है। मतलब इसके पीछे मालूम हो जाता है। वह यह कि स्त्रियां स्वभावकी भोलीभाली होती हैं। उन्हें बाकायदा पूजन-विधिसे क्या तअल्लुक ? परन्तु नहीं, इन भावों-पर ही श्रीजीको परमानन्दकी प्राप्ति होती है।

इसके पश्चात्‌की लीला बड़ी करुणापूर्ण है। यात्रियोंको कलेजेपर पत्थर ही रख लेना पड़ता । इससे बचने या इसे न देखनेका कोई उपाय भी नहीं है। मन्दिरसे बाहर कुछ दूरपर पीपलके पेड़ खड़े हुए हैं। इनके नीचे कंडोंकी आगमें भगवानके आयुध—शंख, चक्र, गदा, पद्म तपते रहते हैं। एक ओर कतार बांधे बालक, वृद्ध, युवा सभी अवस्थाके लोग छाप लेनेको तैयार रहते हैं। इनमें बहुतेरे तो पहले ही उदास हो जाते हैं। जब समय आता है, तब पृथ्वीमें हाथ रोपकर लोगोंको छाप लेनेके लिये तैयार हो जाना पड़ता है। फिर भगवानके आयुध, लम्बे लम्बे चीमटोंसे बाहर निकालकर, छपाछप क्षण मात्रमें लगते रहते हैं इसके पश्चात छापोंको दूधमें डबो देते हैं। छाप लग जानेपर यात्रियोंको दृढ़ धारण हो जाती है कि अब हमारे सामने भूलकर यमदूत नहीं आ सकते।

दूसरे दिन तांगेपर बैठकर गोपी तलाई जाना चाहिये। मार्गमें ज्योतिर्लिङ्ग महादेवके दर्शन होते हैं जिनकी कथा द्वारका-धाममें लिखी है। यह वही नागेश्वर महादेव हैं। यात्री भोजन साथ लेकर यहां ग्रहण करते हैं, कोई कोई गोपीतलाईमें चलकर प्रसाद पाते हैं। नागेश्वरमें रातको कोई ठहरता नहीं। कहावत मशहूर है कि

यहां एक नाग रातको भगवान शिवके पास आकर लिपट रहता बतलाते थे, इस समय तो पक्के घाट स्थान बन गये हैं, उस वक्त शून्य अरण्य ही अरण्य था। अब रातको यात्री यहां ठहर सकते हैं, सुविधा हो गई है। पर काबोंका अब भी बड़ा डर रहता है। नहीं मालूम ऐसे प्रबल राज्यमें चोरवृत्तिका निरोध क्यों नहीं होता।

गोपी तलाई

पहले गोपी तलाईका प्रसार सैकड़ों बीघे घेरकर था। इसकी मिट्टी पीली और कहीं कहीं सफेद रङ्गकी थी। लोग उठाकर अपने हाथोंसे लाते थे। गोपी-चन्दन बना बनाकर लोग अब भी बेंचते रहते हैं। जब गोपियोंको लेकर अर्जुन आ रहे थे तब लुटेरोंसे इसी जगह उन्हें सामना करना पड़ा था और उस महावीर गाण्डीवधारीको प्रज्वलित अभिमानके लिये ईश्वरप्रदत्त दण्ड स्वरूप गोपियोंको हाथसे खोना पड़ा था। कितना अमोल, दूर स्मृतिके गर्भसे हमारी अखण्डवीरताको जगानेवाला इतिहास है। कहां हैं आज वे अर्जुन और कहां हैं आज वे श्रीकृष्णके लिये सदा पागल रहनेवाली प्रेमकी पवित्र मूर्ति गोपियां? महावीर सुरासुर विजयी अर्जुनका सारा शौर्य यहां तुच्छ लुटेरोंके सामने दिनके चन्द्रकी तरह निष्प्रभ हो गया। भगवान

श्रीकृष्णके अन्तर्धान होनेके साथ ही अर्जुनका सम्पूर्ण बल-विक्रम अस्तंगत सूर्यकी तरह निस्तेज हो गया। गोपियां जो अर्जुनके साथ लौटकर आ रही थीं ऐसी अवस्था देखकर खुद भी इसी सरोवरमें श्रीकृष्णको याद करके तल्लीन हो गईं। लुटेरे काबे देखतेके देखते रह गये। उसी दिनसे परम पवित्र गोपी तलाईके नामसे यह सरोवर प्रसिद्ध हुआ। इसका चन्दन भक्त यात्रियों तथा दूसरे श्रद्धालु मनुष्योंको अवश्य लगाना चाहिये। इस समय गोपी तलाईपर कई स्थान बन गये हैं। पहले यह एक वैराग्य उत्पन्न करनेवाला स्थान था। इस प्रकार परम पवित्र स्थानके दर्शन कर वियोग कष्टका सहन करते हुए बारम्बार श्रीप्रभुको यह याद दिलावे कि फिर बुलाइयेगा—फिर दर्शन दीजियेगा, द्वारकाधामसे गाड़ीपर सवार हो सिद्धपुर मातृगयाको प्रयाण करना चाहिये।

सिद्धपुरका स्टेशन देखते ही दूसरे स्टेशनोंके भाव गायब हो जाते हैं। यह स्टेशन मठ और मन्दिरोंकी तरहका है। यहांसे सवारीपर या पैदल चलकर एक मीलसे कुछ दूर प्रत्यक्ष सरस्वतीके तटपर ठहर जाना अच्छा है। जिसकी माताका स्वर्गवास हो गया हो उसके लिये यहां श्राद्ध करना परम आवश्यक है। राजे महाराजे, सेठ साहूकार सब लोग यहां अपनी माताका श्राद्ध कराते हैं। सरस्वती तटपर हजारोंकी संख्यामें यात्री स्नान, पूजन, तर्पण,पिण्डदान करते देख पड़ते हैं। प्रत्यक्ष रूपसे जैसी सरस्वती यहां है, ऐसी और कहीं नहीं। दूसरे इतनी गहरी

भी नहीं कि डूबनेका भय हो। इस शहरमें एक महलके कुछ खण्ड खड़े हैं। इस महलको अवश्य देखना चाहिये। इसका इतिहास सुनकर चकित होना पड़ता है। सिद्धपुरसे सीधे गाड़ी अहमदाबादको जाती है। इसीपर सवार हो जाना चाहिये। अहमदाबादसे गाड़ी १०बजेके करीब मिलती है इसीसे अवन्तिकापुरी (उज्जैन) को जाना चाहिये। ११॥ बजे गोधरा जंक्शनपर उतर १॥ बजेकी गाड़ीपर सवार होना चाहिये। यह गाड़ी बड़ोदासे आती है। यहांकी भूमि बड़ी भयंकर मालूम देती है। दिनभर चलकर गाड़ी रतलाम स्टेशन पहुंचती है। फिर फतीयाबादके बाद उज्जैन स्टेशन आ जाता है। क्षिप्रा नदीके तटपर फतेहपुरियोंकी धर्मशालामें ठहरना अच्छा है। पहले-पहल क्षिप्राके तटपर यात्री पहुँचते हैं। इसका किनारा पक्का बन्धा हुआ है। यह बहुत पुराना है इससे यहांके प्राचीन वैभवका अच्छा ज्ञान हो जाता है। क्षिप्राका स्नान बड़े भाग्यसे मिलता है। शास्त्रोंमें इसका बहुत बढ़ाचढ़ा माहात्म्य गाया गया है। नदीमें कछुए बहुत हैं। जरा सावधानीसे स्नान करना चाहिये। स्नान, पूजन, पिण्डदान आदि समाप्त कर उज्जैनके महाराजा ज्योतिलिंग श्रीमहाकालेश्वरके दर्शन करने चाहिये।

जाते समय मार्गमें कई तालाब मिलते हैं। इनमें सिंघाड़े बहुत होते हैं। महाकालेश्वर पहुँचकर एक पक्का तालाब देखियेगा। यह शिवगङ्गाके नामसे प्रसिद्ध है। पहले इसमें मार्जनकर पवित्र हो यात्री लोग मशालके सहारे एक गुफाकी

ओर जाते हैं। इस समय सर्व धातुओंका बना एक नन्दिकेश्वर दृष्टिगोचर होता है। इनकी पूजा करके महाकालेश्वरके पास जाना चाहिये। दीपज्योतियोंकी सहायतासे महाकालेश्वरके दर्शन कर यात्रियोंको परम प्रसन्नता होती है, गद्गद्कण्ठ शिवजीका नाम लेते हुए उन्हें देहकी भी सुधबुध नहीं रहती। पूजाकर बाहर आ महाराजके दीवान अगलेश्वरके दर्शन करना चाहिये। यहां दीपावलीके दो स्तम्भ खड़े हुए हैं। इनपर जब रोशनी होती है तब जगमगाते हुए वृक्षकी तरह देखकर बड़ा आह्लाद होता है। जबतक उज्जैनमें वास हो तबतक दोनों समय दर्शन करना चाहिये। दूसरे दिन क्षिप्रा नदीसे परिक्रमा प्रारम्भकर देखनेसे बड़े अद्भुत दृश्य देखनेको मिलते हैं। एक जगह एक मस्जिद है। इसको उड़ी हुई मस्जिद कहते हैं। किसी समयमें यह मस्जिद उड़ती हुई कहीं जा रही थी। इसे देखकर एक सिद्ध पुरुषने कहा, यहीं ठहर जा। बस मस्जिद वहीं रह गई। मस्जिदके नीचे अब भी नींव भरी हुई नहीं नजर आती। फिर ऋणमुक्तेश्वरके पास यहांकी भूमि देखनेसे उलटी हुई नजर आती है। इसके लिये यह कहावत है कि एक सिद्ध पुरुषने इसको उलट दिया था। इसीमें गोपीचन्दकी गुहा मिलती है। यहांके गोसाईं लोग मशालके सहारे यात्रियोंको भीतर ले जाते हैं। यहींपर बैठकर गोपीचन्द राजाने तपस्या की थी। फिर इसी तरह दूसरी गुफामें जाना होता है। यह गुफा महाराज भर्तृहरिकी तपस्याका स्थान है। यहां धुनीकी भस्म, चिमटा दिखाई

देगा। ऊपरकी ओर देखिये तो एक शिला लटकती हुई देख पड़ेगी। कहते हैं, महाराज भर्तृहरि भजनमें तल्लीन थे, उसी समय यह शिला उनके ऊपर कटकर गिर रही थी। यह देख यह राजने कहा, बस वहीं ठहर जा। उसी दिनसे यह शिला ज्योंकी त्यों लटक रही है। इसके बाद उस जगदम्बाका मन्दिर मिलता है जिसने तपस्वीको अमरकाल दिया था। जिसके लिये कहते हैं, अन्तमें महाराजको ज्ञान हुआ। उज्जैनमें बड़े बड़े सिद्धोंके स्थान हैं। दर्शन करते हुए कई दिन लग जाते हैं। यहां महाराज विक्रमादित्यके विशाल प्रासादका जीर्णांश अब भी दर्शकोंकी करुणा जगा देता है। इसको यात्रीगण बड़े भावावेशमें देखते हैं। इसकी पूजा करते हैं। उज्जैनका बाजार और अहल्याबाईका श्रीगोपाल-मन्दिर अवश्य देखना चाहिये। और योंतो उज्जैनकी प्राचीनता, उसकी ऐतिहासिकता, उसकी वर्तमान अवस्थाके दृश्य, उसके निवासियोंके आचार-व्यवहार, वहांकी महत्ता आदिके सम्बन्धमें अगर कोई पूर्ण प्रकाश डालना चाहे तो एक विशाल ग्रन्थ तैयार हो जाय। अस्तु, यहांसे चलते समय महाकालेश्वरको अन्तिम बार प्रणाम करके दिनके ६ बजे यहाँसे प्रस्थान कर ३ बजे मोरटक्का पहुंचना होता है। इसे कोई कोई खेरीघाट भी कहते हैं। उतरकर रात्रिको यहीं डेरा जमा बैलगाड़ीवालोंसे भाड़ा तै कर लेना चाहिये। फिर उनका कोई वस्त्र लेकर पास रख लेना चाहिये। फिर कोई डर नहीं। सूर्योदयसे पहले ला खड़ी कर देंगे। प्रातःकाल ही शौचक्रियासे निवृत्त हो,

गाड़ियोंमें बैठ जायं। चाहिये कि पुरुष एक गाड़ीपर बैठें और स्त्रियां दूसरीपर। फिर मोरटंकसे कुछ दूर निकल जाइयेगा। स्वर्गीय पथ देखकर पुरुषोंके हृदयमें तो पीछेसे पर स्त्रियोंके हृदयको अगाध भक्ति उमड़ चलती है और भजनोंकी झड़ी लग जाती है। सच्चे सनातनधर्मके अटल भावोंसे भरी हुई ऐसी पवित्र भूमि, कि वाह! देखते ही जी मन्त्रमुग्ध-सा हो जाता है। यहां सागवनके पेड़, हरी हरी पत्तियां और फैली हुई दूब देखकर जीकी सारी जलन मिट जाती है। धीरे धीरे मार्गका मध्यभाग आता है। यहां पुराने घने वृक्षोंसे घिरा हुआ एक सरोवर है, ये पेड़ इन्दौरकी अहल्याबाईके लगाये हैं। यहांसे आगे चलनेपर विष्णुपुरी मिलेगी। रातको यहीं विश्राम करना चाहिये। कपिलगङ्गाका प्रवाह पहाड़से निकलकर नर्मदामें मिलता है। यहां ममलेश्वर महादेव हैं। कुछ लोगोंका कहना है कि ममलेश्वर ही ओंकार हैं और यही ज्योतिर्लिंग हैं। परन्तु इस ओंकार ममलेश्वरके कहनेपर भी वास्तवमें ओंकारेश्वर ही ज्योतिर्लिङ्ग महादेव हैं। आज यहीं कपिला और नर्मदाके संगमस्थलमें स्नान कर संतुष्ट हूजिये। ममलेश्वर महादेवका विधिपूर्वक पूजन कर प्रसाद पा हरिस्मरण करते हुए विश्राम कीजिये। दिनके पिछले पहर, जब ४॥ बजनेका समय हो, अपने बिस्तरेसे उठकर उसी मकानकी छतपर चले जाइये। यहांसे ओंकारेश्वरकी छवि-छटा दृष्टिमें पड़ते ही दुःख-ताप जाते रहेंगे। अन्तरात्मामें एक अविनश्वर प्रेम और भक्तिकी धारा बह चलेगी। उस नर्मदा-

तटपर कैसी अद्भुत छवि छा रही है। ओंकार पर्वत ओंकार ही मालूम देता है। जिसपर बना हुआ मन्दिर चन्द्रबिन्दुसा दिखलाई दे रहा है। इस पर्वतपर मन्दिर और राजमहल शोभा दे रहे हैं। पर्वतके दूसरी तरफ नर्मदा और कावेरी दो नदियोंका सुखद प्रवाह और सहस्रों भक्ति-गद्गदकण्ठसे हर-हरकी गगनभेदी मधुर ध्वनि सुनते ही रोमांच होने लगेगा।

ओंकारजी

दूसरे दिन प्रातःकाल नावपर बैठ ओंकारजीमें पहुंच मान्धाता आदिकी धर्मशालोमें ठहरना चाहिये। फिर नर्मदामें विधिपूर्वक स्नान कर पूजनके लिये मन्दिरकी ओर चलना चाहिये। मंदिरमें प्रवेश कर ओंकारजीके दर्शन कीजिये। यह शिवलिङ्ग एक अजब तरहका मालूम देगा। ऐसा जान पड़ता है कि यह शिवलिङ्ग किसीका बनाया हुआ नहीं है। बनावटी प्रतिमाकी तरह इसमें कोई सफाई नहीं है। शिव-जलहरीके अन्दर पुजारी लोग हाथ रक्खे बैठे रहते हैं। जो कुछ चढ़ाया जाता है वह नीचे नहीं गिरने पाता, पकड़ लेते हैं; नहीं तो वह शिवजीके नीचे होकर सीधा नर्मदामें ही जाकर ठहरे। आनन्दपूर्वक पूजा कर पार्वतीजीको प्रणाम करनेके अनन्तर बाहर आ जाना चाहिये। बाहर शुकदेव आदिके दर्शन होते हैं। इस मन्दिरकी आमदनी ओंकारके राजा साहब ही पाते हैं। इस समय यहांके राजा साहब भी महलके भीतर बठे नजर आते हैं। लोग इनके भी दर्शन करते हैं।

यात्रीगण इस पहाड़के ऊपर गौरीशंकर महादेवके दर्शन करने जाते हैं। पहाड़पर जानेके लिये सोढ़ियां बनी हुई हैं। यह शिव-लिंग छः सात हाथ लम्बा और ज्योतिलिंग कहा जाता है। बड़ा ही तेजोमय लिङ्ग है। ओंकारेश्वरकी परिक्रमा नावपर बैठकर पर्वतके चारों ओर घूमकर की जाती है। कहतेहैं, पर्वतके ऊपरसे भी रास्ता है। पैदल चलना पड़ता है। लेकिन यह बहुत दुर्गम है। यात्रियोंको भूलकर भी इस रास्तेसे परिक्रमा न करनी चाहिये। नावपर परिक्रमा करते समयका आनन्द आप कभी न भूलेगा। नर्मदाकी उत्ताल तरंगोंकी चहल-पहल, उनका नावसे अठखेलियां करना, कहीं कहीं सरल रेखा-सा प्रबल प्रवाह, बड़ा हो मधुर, स्वर्गसुखको प्रत्यक्ष कर दिखानेवाला है। जब पर्वतकी परिक्रमा पूरी हो जाती है तब कावेरी और नर्मदाका संगमस्थल आता है। यहां उतरकर यात्री स्नान करते हैं। स्नान समाप्त कर फिर नावपर बैठते हैं। नाव कावेरीमें चलती है। इसी मार्गसे पद्मनाभ और कमल भारती की कुटिया देखकर बड़ा हर्ष होता है। आगे पर्वतसे टक्कर खाकर बड़े वेगसे आती हुई नरमदाके भँवरोंमें नाव पड़ती है ओंकारजी-का ध्यान करते हुए पार कर परिक्रमा समाप्त करनी पड़ती है। सोमवारको पंचमुखी सुवर्ण निर्मित मूर्ति कई नावोंके साथ विहार करनेके लिये निकलती है।

चित्तौड़

इस प्रकार ओंकारमें आनन्द कर मोरटंक स्टेशनको सवार हो मार्गमें अवंतिका (उज्जैन) को प्रणाम करते हुए चित्तौड़में आकर उतरना चाहिये। चित्तौड़ इतिहास प्रसिद्ध स्थान है। यहाँका किला अवश्य देखना चाहिये। किलेमें मीराबाई और अम्बिकामाईके दर्शन होते हैं। किलेके अन्दर बड़े बड़े ८ तालाब हैं। इसकी सुन्दरता और स्मरणीयतापर जो कुछ लिखा जाय, उसकी महत्ताकी दृष्टिसे थोड़ा है। राजपूत वीरोंकी कीर्ति, वह महासमर, किलेकी दीवारपर गोलोंके निशानोंसे आज भी हृदयकी सुप्त वीरताको एक बार अवश्य जाग्रत कर देगा। वह महाश्मशान लीला याद कीजिये, महारानी पद्मिनीकी पवित्र कथा, उज्वल सतीत्व, वीर क्षत्राणीका महासमर, अन्तमें अगणित राजपूत-कुलाङ्गनाओंका चितालिङ्गन याद है न ?—वह महाचिता देखिये—आज भी करुण नेत्रोंसे मानों अपने स्वधर्मी दर्शकोंको देखती है।

नाथ द्वारा

चित्तौड़से सवार हो मावली स्टेशन पहुंच बैलगाड़ियोंसे नाथद्वारा जाना पड़ता है। यह भूमि पर्वतमालासे घिरी हुई है,

मन्दिर मन्दिरोंकी बनावटके नहीं किन्तु राजप्रासादकी तरहके हैं। दर्शन नारियल लेकर करना पड़ता है। नहीं तो दर्शनकी आशा अधूरी रह जायगी। मैं पहलेपहल जब गया था, उस समय जन्माष्टमी-महोत्सव था, हजारोंकी संख्यामें नर-नारी दर्शन करने आये थे। उनमें श्रीमानोंकी ही खातिरदारी होती थी। साधारण-जन बाहर ही खड़े थे। लक्ष्मीके सुपुत्रोंको भीतर कमल चौकमें बैठनेको जगह दी गई थी। एक ओर स्त्रियाँ थीं। मेरी इच्छा हुई कि मैं भी इन्हींमें जाकर बैठूं और पहले दर्शन करूं। लेकिन रास्तेमें द्वारपाल नंगी तलवार लिये खड़ा था। जी सूख गया। पूछनेपर एक बुढ़िया माताने मुझे एक दूसरा द्वार बताया। साथ ही कहा, यह जो पदार्थ हम तयार कर रही हैं, इसको लेते जाओ, तभी जा सकोगे। उनकी आज्ञानुसार मैं दूसरे द्वारसे भीतर घुस गया। वहाँ देखा, वहाँके मंत्री महोदय धनाढ्योंके सामने बैठे हुए थे, बड़ी सजधजसे थे। जब उनकी नजर मुझ-पर पड़ी तो बड़े चकित हुए, पूछा, तुम यहाँ कैसे आये? मैं कुछ न बोला, चुपचाप बैठा रहा। तब श्रीमान् मंत्रीजीकी आज्ञासे खड्गधारी एक सिपाही हाथ पकड़ मुझे बाहर निकाल देनेके लिये ले चला, कोई ५०० आदमी थे—सब अमीर थे—सबके सब मेरी खातिरदारी देखकर प्रसन्न हुए—शायद उन्हें भी याद आया हो कि हमारे बीचमें यह कीट कैसे आ बैठा। सबके सब मुस्करा,कर हंसे। बाहर निकाल देनेपर मेरे हृदयमें फिर वहीं चलकर बैठने-की इच्छा हुई। मैं उसी राहसे फिर भीतर चला गया। थोड़ी

देरमें मंत्रीजीकी निगाह फिर मुझपर पड़ी। उनका नाम था दयाराम !!! श्रीमान्‌ने मुझे देखते ही फरमाया, तुम्हें बाहर निकाल दिया था, फिर तुम यहाँ आ गये ? उनकी उस बातसे मुझे बड़ा क्षोभ हुआ। मैं श्रीजीका स्मरण कर उठा और कहा कि "क्या मैं श्रीजीका भक्त नहीं हूं ? आप जिस बीकानेर भूमिके मनुष्य हैं, मैं भी उसी भूमिका निवासी हूं। चुरू मेरा नगर है। क्या धनाढ्यों और सुन्दरी स्त्रियोंहीको पहले-पहल दर्शन कराये जाते हैं ?" इन शब्दोंसे श्रीमान् मंत्रीजीके होश कुछ ठिकाने हुए। चुप हो रहे। मैं बैठा रहा। लेकिन थोड़ी देरमें फिर उन्हें मेरी सूरत खटकने लगी। एक आदमीसे कानाफूसी कर द्वारपालको संकेत कर दिया कि यह आदमी अबके भीतर हरगिज न आने पावे। मैं ताड़ गया। जब घण्टी हुई तब लोग उठकर चले। मैं भी उधर ही चला, एक दूसरे मार्गसे श्रीजीके सामने पहुँचा। प्रभुके पादपद्मोंमें प्रणाम कर अपने अपमान से उत्पन्न हुई ज्वाला शान्त की। श्रीप्रभुके पास ही गोसाईंजी महाराज कभी चांदीके लड्डु, कभी फिरकी, कभी झुन झुनियां लेकर खेला रहे थे। पास मंत्रीजी खड़े थे। मुझे देखकर त्योरियां बदल रहे थे। मैंने कहा, अब इतना जामेसे बाहर न हूजिये; श्रीजीकी मुझपर कृपा है, उन्होंने मुझे बुला लिया। मेरी बात सुनकर गोसाईंजी मुस्कराये और मुझको बुला लिया। अस्तु आनन्दपूर्वक श्रीप्रभुको देख जीवन सफल किया। परन्तु मैं सबकी सुविधाके लिये आवाज उठाता हूं कि यह प्रथा

यहांसे उठ जानी चाहिये कि अमीरोंको तो सुभीतेसे दर्शन कराये जायं और गरीब बेचारे ठोकरें सहते रहें। क्या देवदर्शनोंमें भी अमीर और गरीबका विचार है? यहां प्रसाद भी बिना टकेके नहीं मिलता। हम लोग यहां ६ रोज रहे, फिर बाहर निकलनेकी चिट्ठी प्राप्त कर यहांसे चले।
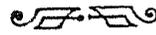
पुष्कर

यहांसे ६ कोसपर एक बड़ा तीर्थ है। यह एकलिंगजी का स्थान है। राजपूत-इतिहासके साथ एकलिंग महादेवकी कीर्ति भी अमर है। एकलिंग उदयपुरके देवता हैं। उदयपुर यहांसे ६ कोस है। राज्यको 'चपरासों' में भी एकलिंगजी खुदा रहता है।

यहांसे सवार हो यात्रियोंको अजमेर प्रस्थान करना चाहिये। अजमेरमें आनासागर एक बाग और जैनियोंके मन्दिर देखने लायक हैं। फिर इक्केपर बैठकर तीर्थराज पुष्कर जाना चाहिये। तीन धामकी यात्रा करके आये हुए यात्री अन्तिमवार धोती यहीं धोकर यात्रा सम्पूर्ण करते हैं। पुष्करकी महत्ता अवर्णनीय है। दृश्योंका तो कहना ही क्या, प्रकृतिका उदार राज्य-सा फैला हुआ है। यहाँ तीन पुष्कर हैं—आदि पुष्कर, मध्य पुष्कर और वृहत् पुष्कर। इन तीनों पुष्करोंमें स्नान करना चाहिये। एक रोज़

परिक्रमा भी कर डालनी चाहिये। अगर शक्ति हो। गौघाटसे आरम्भ कीजिये। छत्री तीर्थ देखिये, फिर बाराहघाट। यह बहुत बड़ा है और बना भी बहुत पुराने जमानेका है। परिक्रमा करते करते घाट छूट जाते हैं। एक ओर पुष्कर और दूसरी ओर पर्वत-माला आ जाती है। ४ बजेके समय पापमोचनी पर्वतपर पहुंच एक दिन श्री सावित्रीके दर्शन अवश्य करें। यह पर्वत सुन्दर शिखरके सदृश आकाशसे बातें कर रहा है। इसपर डोलियां जाया करती हैं। सावित्रीजीकी कथा भारतके घर घरमें पढ़ी जाती है। वे स्त्रियोंकी आदर्श हैं। यहां उनकी जो प्रतिमा है वह तेजोमयी है। उनके दर्शन कर प्राकृतिक लीलाएं देखनी चाहिये जो आश्चर्यमें डालनेवाली हैं। पुष्करमें प्रधान मन्दिर ब्रह्माका है। यहांके सिवा ब्रह्माका मन्दिर और कहीं नहीं है।

पुष्करमें दिव्यदेश विशेषकर उल्लेखयोग्य है। इसके बननेमें पांच वर्षके लगभग समय लगा है। इसका मुख्य द्वार तीर्थाभिमुख और जोधपुरके सुरसागर खानके गेहुंरंगे पत्थरसे अनेक कारीगरीके साथ बना है। भीतर सभा-मन्दिरमें कुल पत्थर मकरानेके लगे हैं। यहां राजपुतानेकी कारीगरी देखते ही बनती है। यह दिव्य देश १८ बीघाके घेरेमें बना है। इसके अन्दर बाग, कूप, गोशाला आदि बड़े सुरम्य मालूम देते हैं। यहां विद्या-दानकी व्यवस्था भी अच्छी है। अच्छे अच्छे आचारी आचार्यों-से अध्यापनका कार्य लिया जाता है। इसके निर्माणकर्ता डिड-वाना निवासी कलकत्तेके सुप्रसिद्ध श्रीमगनीराम बांगड़ हैं। दिव्य

देशके देखनेमें समय लगता है। इसलिये धर्मशाला या भरतपुर महाराजके कुंजमें आसन लगा गऊघाटपर जाना चाहिये। पुष्करमें बड़ी सावधानी रखनेकी आवश्यकता है। हाथमें एक डण्डा या छड़ी रहे तो और अच्छा। क्योंकि यहांके मगर नामी हैं। पण्डेजी यहां तीर्थका आह्वान करते हैं। क्योंकि सालमें, कार्तिक सुदी एकादशीसे लेकर पूर्णिमातक, सिर्फ ५ दिन वास करके पुष्कर महाराज यहांसे अन्तर्हित हो जाते हैं। शास्त्रीय विधान है कि आह्वान करनेपर वे आ जाते हैं। स्नान, पूजन, परिक्रमाका हाल हम पीछे लिख चुके हैं।

परिक्रमा-समाप्त कर ब्रह्माके दर्शनके पश्चात् तीन धामोंकी यात्रा पूर्ण होती है। यहांसे जहां इच्छा यात्री जा सकता है। लोग यहींसे अपने अपने घरका मार्ग लेते हैं। जिन्हें प्रयागके रास्तेसे होकर आना है, उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि जो रेणुका : धनुष-कोटिकी वे लेते आये हैं, उसे अगर त्रिवेणीमें छोड़ दें तो एक शिव-मन्दिर-निर्माणके इतना पुण्य होगा। जिन्हें कलकत्तेकी तरफ आना है वे अजमेर, फुलेरा, मथुरा, अयोध्या और प्रयाग अवश्य होते आवें।

बद्रीनाथ

इस पुस्तकमें बद्रीनाथ, मानसरोवर, गंगोत्तरी, केदारनाथ, आदि उत्तराखण्डके पवित्र तीर्थस्थलोंकी आवश्यक वर्णना नहीं

श्रीबद्रीनारायण धाम ।
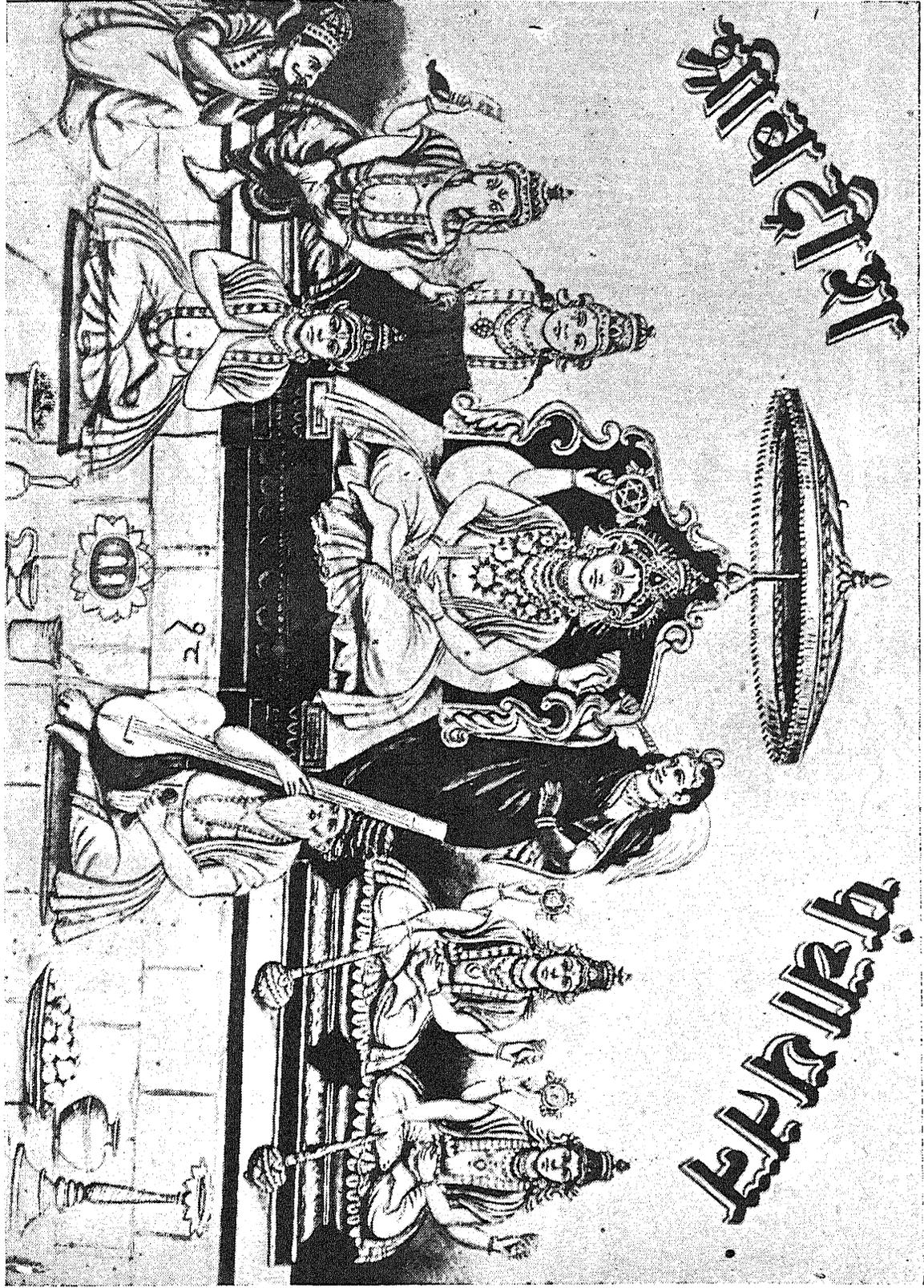
आ सकी। कारण यह कि मेरा विचार उत्तराखण्डकी यात्रापर एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखनेका था और अब भी है। यदि ईश्वरकी कृपा और प्रेरणा हुई तो शीघ्र ही मैं अपनी मनोभिलाषा पूर्ण करनेकी चेष्टा भी करूंगा। इस पुस्तकमें बद्रीनाथ आदिकी विस्तृत वर्णना एक दूसरे विचारसे भी नहीं की गई। वह यह कि यात्री लोग तीन धामोंकी यात्रा करके, उसी समय बद्रीनाथ-की यात्रा नहीं करते, न कर सकते हैं। वे थक जाते हैं, और समय भी लग जाता है, अतएव उन्हें कुछ कालके लिये विश्राम करनेकी आवश्यकता आ पड़ती है। इसलिये वे सीधा घरका मार्ग लेते हैं और स्वास्थ्य सुधारकर ही समयानुसार चतुर्थ धाम, बदरिकाश्रमके लिये प्रस्थान करते हैं। और जो लोग पहले बद्रीनाथको यात्रा करते हैं वे वहांसे वापस आकर साथ ही अपर तीन धामोंकी यात्रा नहीं करते। वे सीधे घरपर ही आकर ठहरते हैं। इसका कारण स्पष्ट बस वही है कि अधिक परिश्रम-के पश्चात् कुछ कालके लिये विश्राम आवश्यक हो जाता है। चाहे पुरी, रामेश्वर और द्वारका, इन तीन धामोंकी यात्रा एक साथ करके विश्राम करे, या अकेले बदरिकाश्रमसे लौटकर विश्राम करे, मतलब यह कि चारों धामकी यात्रामें बदरिकाश्रम अपर तीन धामोंसे विश्लिष्ट ही है। इसलिये इस पुस्तकमें हम उसका उल्लेख संक्षेपमें ही करके शान्त होंगे। इसकी विस्तृत वर्णना ईश्वरकी इच्छापर अवलम्बित है। यदि ईश्वरकी कृपा हुई और पाठकोंसे मुझे उत्साह मिला तो विश्वास है कि एक

दूसरी पुस्तक इसी तरहकी बद्रीनाथके मार्गके परिचयमें तैयार हो जाय। परन्तु फिर भी यहां संक्षेपमें, पाठकोंके धैर्यके लिये, बद्रीनाथके मार्गका वर्णन किया जाता है।

हरिद्वार इस मार्गका द्वार है, इससे प्रवेश करके यात्रियोंको हृषीकेश पहुंचना चाहिये। हृषीकेश हरिद्वारसे १२ मील पड़ता है। बैलगाड़ी व इक्के यात्रियोंको मिल सकते हैं। हृषीकेशसे फिर आप चाहे जहां जायं, गंगोत्तरी, मानसरोवर, केदारनाथ या बद्रीनाथ, आपको गगनविचुम्बी पर्वतोंके रास्तेसे ही गुजरना होगा। मार्ग क्या है, केवल एक पहाड़से उतरकर दूसरेपर चढ़ना है। यहींके लिये यह कहावत मशहूर है—"नौ दिन चले अढ़ाई कोस।"

यात्रियोंको इस यात्रामें बहुत सावधान रहना चाहिये। क्योंकि समतल देशोंके रहनेवाले यात्री इस पहाड़ी देशमें प्रायः बीमार पड़ जाते हैं। उस समय एकाएक उस दुर्गम पार्वत्य भूमिमें सहायताके अभावसे बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। इसलिये, सबसे पहले तो यात्रियोंको कपड़े-लत्तेसे लैस होकर यहांकी यात्राके लिये कमर कसनी चाहिये। जूता, छतरी, दोलाई, कम्बल, पायजामा आदि अपने कामकी चीजें जरूर साथ हों। जिनके पास इनका अभाव हो वे चाहें तो हरिद्वारमें यह सब सामान खरीद सकते हैं। क्योंकि वहां यात्रियोंकी आवश्यकता-पूर्तिके लिये दूकानोंमें सब सामान इकट्ठे मिल जाते हैं। हाजमा दुरुस्त रखनेके लिये कोई अच्छा चूर्ण और बुखार आदिके बचावके लिये भैरवरसादि लेना

चाहिये। भोजनके लिये कुछ साथमें लेनेकी आवश्यकता नहीं। क्योंकि बद्रीनाथतक सब चट्टियोंमें भोजनका सामान मिल जाता है; और कहीं कहीं तो आवश्यक बर्तन भी दूकानदारोंसे मिल जाते हैं।

हृषीकेषसे लक्ष्मणझूला एक मीलपर गङ्गाजीके दाहिने किनारेपर है। पास ही एक छोटा-सा मन्दिर है, श्रीशत्रुघ्नजी-की मूर्त्ति स्थापित है। शत्रुघ्नजीके मन्दिरसे लक्ष्मणजीका मन्दिर एक मील पड़ता है। गङ्गाके किनारे किनारे चलना पड़ता है। चढ़ाई-उतराई सुगम है। लक्ष्मणजीका मन्दिर शिखरदार है। भीतर २ हाथकी ऊंची, श्रीलक्ष्मणजीकी गौरांग मूर्त्ति विराजमान है, जिसके दर्शन कर जीवन चरितार्थ हो जाता है। इस मन्दिरसे २ फरलांगपर गंगाजीके ऊपर लक्ष्मणझूला नामक लटकता हुआ लोहेका पुल है। यात्री लोग इसे पार कर फिर आगे बढ़ते जाते हैं। यहाँ एक बात स्मरण रखनी चाहिये। पुल उतरनेके बाद ही एक दोमुँहामार्ग मिलेगा। जो मार्ग बाँई ओर गया है, बदरिकाश्रमका मार्ग वही है और दाहिनी ओरवाला मार्ग मणिकूट पर्वतपर गया है।

उत्तराखण्डके पार्वत्य दृश्यों,प्रकृतिकी सजीव छटाका वर्णन थोड़ेमें क्या करूं? उमड़ते हुए हठीले हृदयको यहां मुझे बर-बस रोकना पड़ रहा है। क्योंकि इस पुस्तकमें बदरिकाश्रमकी यात्राका हाल इतने संक्षेपमें लिखनेका विचार है कि वह नहींके

बराबर ही होता है। अपनी लालसा मैं पहले जाहिर कर चुका हूं,और फिर निवेदन करता हूं कि पाठकोंकी आज्ञा और ईश्वरकी प्रेरणा होगी तो फिर किसी दूसरी पुस्तकमें स्वतन्त्ररूपसे परम रमणीय संसारकी सर्वश्रेष्ठ भूमि, प्रकृतिके विहारस्थल, ऋषि-मुनियोंके तपस्याक्षेत्रका विस्तृत वर्णन करूंगा।

अस्तु, सबसे पहले गरुड़चट्टी मिलेगी, फिर फूलचट्टी, इसी तरह चट्टियोंमें रमते हुए, भीलेश्वर, देव प्रयाग, श्रीनगर, रुद्रप्रयाग, गङ्गा और मन्दाकिनीका संगमक्षेत्र, रुद्रेश्वर, गुप्तकाशी, धामाकोटी, महिषासुरमर्द्दिनी, मन्दराचल, शाकम्भरी दुर्गा, त्रियुगी नारायण, मुण्डकरागणेश, गौरीकुण्ड, चीरवासा भैरव, श्रीकेदारनाथ, ऊखीमठ, मध्यमेश्वर, तंगनाथ, मण्डलगाँव, रुद्रनाथ, गोपेश्वर, चमौली, विरही नदी और अलकनन्दाका संगम, आदि बद्री, कल्पेश्वर, वृद्ध बद्री, जोशीमठ, भविष्य बद्री, विष्णुप्रयाग, पाण्डुकेश्वर, योगबद्री आदि अनेक पुण्य-स्थलों, देवों, देवालयों, पूतसलिलोद्रा सहोद्रा अनेक नदियों, नयन-मनोरञ्जिनी, स्वर्गस्वप्नसे भी सुन्दर कितनी ही प्रकृतिकृतियों-को देखकर नश्वर शरीरका सार्थक गौरव मनाते हुए प्रधान तीर्थक्षेत्र बद्रीनाथके पादपङ्कजोंमें आकर हाजिर हूजिये। दर्शनोंसे जीवन तो पवित्र है ही, साथ ही, कुल-परिवार, पूर्वज और वंश भी पवित्र हो जायगा। पूर्वजगण आप जैसे सुपुत्रकी पवित्रता-पर अनेकानेक आशीर्वाद देंगे और उनकी आत्मा सर्वप्रकारकी बाधाओंका अतिक्रमण करके अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति होगी।

आप भी अपने गुरुभार पितृऋणसे सदाके लिये निष्कृति पाकर मुक्तात्माके सदृश पापलेशरहित होकर संसारमें विचरण करेंगे।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

Cover printed by the Indian Art School, 257A, Bowbazar St., Cal.